RNI No. RAJHIN/2020/11458

वर्ष : 6 अंक :7 जुलाई, 2026 मूल्य : 80 रु. पृष्ठ : 44

राजस्थान टुडे

बारिश के बाद भी प्यास 7

हर बूंद का फैसला लिखेगा राजस्थान का भविष्य

9 विश्लेषण
क्या खत्म हो रहा है धरती का जल भंडार?

11 ग्राउंड रिपोर्ट
तालों में कैद पानी, टैंकरों के भरोसे जिंदगी

14 हेरिटेज स्टोरी
जल वैभव की विरासत

साक्षात्कार 17
वर्षा जल को सहेजना ही असली चुनौती

हजारों नजरों का अटूट भरोसा

डॉ. कामदार नेत्र चिकित्सालय

Dr. k डॉ. कामदार नेत्र चिकित्सालय
A REFLECTION BEYOND VISION

123, द्वितीय पोलो, करणी मार्ग शिप हाउस, पावटा, जोधपुर, राज.
फोन : 0291-2551111, 2552222

MOST OF TPA EMPANELMENT AVAILABLE

Central Government Health Scheme
Ministry of Health & Family Welfare
Government of India

राजस्थान टुडे

आपकी पत्रिका, आपकी बात
www.rajasthantoday.online

RNI No. RAJHIN/2020/11458
वर्ष 6, अंक 7, जुलाई 2026

प्रधान सम्पादक - दिनेश रामावत
प्रबंध सम्पादक - राकेश गांधी
राजनीतिक सम्पादक - सुरेश व्यास
कार्यकारी सम्पादक - अजय अस्थाना
सह सम्पादक - बलवंत राज मेहता

विशेष प्रतिनिधि
नई दिल्ली - राधा रमण
जयपुर - मणिमाला शर्मा, विवेक श्रीवास्तव
उदयपुर - मधुलिका सिंह
कोटा - अरविन्द गुप्ता
बीकानेर- राकेश आचार्य
पाली - चैनराज भाटी
सिरोही - गणपत सिंह
जालोर - तरुण गहलोत
बाड़मेर - धर्मसिंह भाटी

रेखाचित्र- राजेंद यादव

विज्ञापन प्रतिनिधि
जोधपुर - प्रवीण गिरी - 99280 26609
कोटा - यतीन्द्र जैन - 94140 76997

संपादकीय कार्यालय
बी-4, फोर्थ फ्लोर, एम.आर. हाईट्स महावीर कॉलोनी,
भास्कर सर्किल, रातानाड़ा, जोधपुर - 342 011
व्हाट्सएप नंबर - 81078 00000
ई-मेल - rajasthantoday@gmail.com

सभी विवादों का निपटारा जोधपुर की सीमा में आने वाली सक्षम अदालतों और फोरमों में किया जाएगा।

राजस्थान टुडे में प्रकाशित आलेख लेखकों की राय है। इसे राजस्थान टुडे की राय नहीं समझा जाए। राजस्थान टुडे के मुद्रक, प्रकाशक और प्रधान सम्पादक इसके लिए जिम्मेदार नहीं होंगे। हमारी भावना किसी वर्ग या व्यक्ति को आहत करना नहीं है। विज्ञापनदाताओं के किसी भी दावे का उत्तरदायित्व राजस्थान टुडे का नहीं होगा।

मारवाड़ मीडिया प्लस के लिए मुद्रक एवं प्रकाशक पूनम अस्थाना द्वारा बी-4, फोर्थ फ्लोर, महावीर कॉलोनी, रातानाड़ा, जोधपुर-342 011 से प्रकाशित और डी.बी. कॉर्प लिमिटेड, 10 जे.एल.एन. मार्ग, जयपुर में मुद्रित। संपादक : अजय अस्थाना*
(*पी आर पी एक्ट के तहत उत्तरदायी)

अंदर विशेष

4 अपनी बात
युद्ध तो थम गया, क्या अब भरोसा भी लौटेगा?

नियमित कॉलम

19 बात बेलगाम
24 बोल हरि बोल
41 अभिव्यक्ति
42 ग्रहों की चाल

7 बारिश के बाद भी प्यास

9 क्या खत्म हो रहा धरती का जल

11 तालों में कैद पानी, टैंकरों के भरोसे...

14 हेरिटेज स्टोरी...
जल वैभव की विरासत

17 साक्षात्कार...
वर्षा जल को सहेजना ही असली चुनौती

25 राष्ट्रीय राजनीति...
दल-बदल का खेल, बेमेल

27 प्रदेश राजनीति...
राजस्थान कांग्रेस का अंतहीन थ्रिलर

29 प्रदेश राजनीति...
सत्ता का आधा सफर, परीक्षा अभी बाकी

31 देश-दुनिया...
पाकिस्तान की बेचैन सरहदें

33 पड़ताल...
मातृत्व की राह में मौत का साया

35 पड़ताल...
भारत के दो ध्रुवः जुझारू हाशिया...

37 जीवन प्रबंधन...
मोको कहां ढूंढे रे बंदे...

39 स्पोर्ट्स...
विश्व फुटबॉल का बदलता चेहरा

युद्ध तो थम गया, क्या अब भरोसा भी लौटेगा?

युद्धविराम हमेशा राहत की खबर होता है। जब मिसाइलें थमती हैं, लड़ाकू विमान अपने अड्डों पर लौटते हैं और दुनिया परमाणु टकराव की आशंका से कुछ कदम पीछे हटती है, तो स्वाभाविक है कि हर कोई चैन की सांस लेता है। लेकिन पश्चिम एशिया का इतिहास हमें बार-बार यह सिखाता है कि युद्धविराम और स्थायी शांति एक ही बात नहीं होते। युद्ध कुछ समय के लिए रुक सकता है, लेकिन अविश्वास, राजनीतिक प्रतिस्पर्धा और क्षेत्रीय वर्चस्व की लड़ाई इतनी आसानी से समाप्त नहीं होती।

अमेरिका और ईरान के बीच हाल का युद्धविराम भी कुछ ऐसा ही संकेत देता है। पहली नजर में लगता है कि संकट टल गया है, लेकिन सच यह है कि असली परीक्षा अब शुरू हुई है। अब यह देखना होगा कि क्या दोनों देश हथियारों की भाषा छोड़कर संवाद और भरोसे की राह पर आगे बढ़ पाएंगे, या फिर यह युद्धविराम भी अगले संघर्ष से पहले का एक छोटा-सा विराम साबित होगा।

पिछले कुछ दिनों में पूरी दुनिया ने देखा कि किस तरह पूरा पश्चिम एशिया तनाव के साये में आ गया। तेल बाजार अस्थिर हो गया, समुद्री व्यापार पर खतरा मंडराने लगा और वैश्विक अर्थव्यवस्था में अनिश्चितता बढ़ गई। सबसे बड़ी चिंता होर्मुज जलडमरूमध्य को लेकर थी, जहां से दुनिया के समुद्री तेल व्यापार का बड़ा हिस्सा गुजरता है। यदि यह मार्ग बाधित होता, तो केवल अमेरिका और ईरान ही नहीं, बल्कि एशिया, यूरोप और अफ्रीका तक इसकी आर्थिक कीमत चुकानी पड़ती। इसलिए युद्धविराम का स्वागत होना स्वाभाविक था।

लेकिन यह स्थिति बनी क्यों? इसका उत्तर केवल हाल की घटनाओं में नहीं, बल्कि पिछले चार दशकों के इतिहास में छिपा है। अमेरिका और ईरान के रिश्ते लंबे समय से परमाणु कार्यक्रम, आर्थिक प्रतिबंधों, क्षेत्रीय प्रभाव और राजनीतिक अविश्वास के बीच उलझे हुए हैं। कई बार बातचीत शुरू हुई, उम्मीदें जगीं, लेकिन हर बार कोई न कोई घटना उस प्रक्रिया को पटरी से उतार देती रही। इसलिए केवल युद्धविराम की घोषणा को स्थायी समाधान मान लेना वास्तविकता से आंखें मूंदना होगा।

दोनों देशों की अपनी-अपनी मजबूरियां भी हैं। अमेरिका चाहता है कि ईरान का परमाणु कार्यक्रम अंतरराष्ट्रीय निगरानी में रहे और भविष्य में परमाणु हथियार बनने की कोई संभावना न बचे। दूसरी ओर ईरान अपनी संप्रभुता और वैज्ञानिक क्षमता पर बाहरी नियंत्रण स्वीकार करने को तैयार नहीं है। वह चाहता है कि पहले आर्थिक प्रतिबंधों में राहत मिले, उसकी अर्थव्यवस्था को सांस लेने का अवसर मिले और उसके बाद व्यापक समझौते की दिशा में आगे बढ़ा जाए। यही मतभेद इस वार्ता की सबसे बड़ी चुनौती हैं। यह भी याद रखना होगा कि इस पूरे घटनाक्रम में केवल अमेरिका और ईरान ही नहीं हैं। इजराइल, गाजा, लेबनान, खाड़ी देश, रूस, चीन और यूरोप—सभी की अपनी-अपनी रणनीतिक चिंताएं हैं। इसलिए यह केवल दो देशों का विवाद नहीं, बल्कि पूरे पश्चिम एशिया की सुरक्षा व्यवस्था का प्रश्न है। यदि क्षेत्र के अन्य मोर्चों पर तनाव बना रहता है, तो कोई भी द्विपक्षीय समझौता अधूरा साबित हो सकता है।

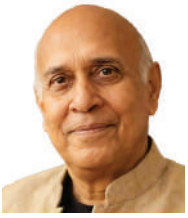

दिनेश रामावत
प्रधान सम्पादक

अमेरिका-ईरान युद्धविराम ने तत्काल तनाव तो कम किया है, लेकिन स्थायी शांति की राह अब भी कठिन है। परमाणु विवाद, क्षेत्रीय राजनीति और आपसी अविश्वास के बीच वास्तविक सफलता इसी में होगी कि क्या यह विराम भरोसे, संवाद और दीर्घकालिक स्थिरता का आधार बन पाता है।

युद्धविराम का सबसे सकारात्मक असर तेल बाजार पर दिखाई दिया है। कच्चे तेल की कीमतों में कुछ नरमी आई है, जिससे भारत जैसे आयातक देशों को राहत मिली है। लेकिन यह राहत अभी स्थायी नहीं कही जा सकती। यदि भविष्य में फिर कोई सैन्य तनाव पैदा होता है, तो सबसे पहले ऊर्जा बाजार प्रभावित होंगे और उसके बाद पूरी वैश्विक अर्थव्यवस्था पर उसका असर दिखाई देगा।

भारत के लिए यह पूरा घटनाक्रम केवल विदेश नीति का विषय नहीं है। हमारी ऊर्जा सुरक्षा, महंगाई, व्यापार और खाड़ी देशों में काम कर रहे लाखों भारतीयों का भविष्य इससे जुड़ा हुआ है। पश्चिम एशिया में स्थिरता भारत के आर्थिक हितों के लिए आवश्यक है। यही कारण है कि भारत ने हमेशा संतुलित कूटनीति अपनाई है। उसके अमेरिका, ईरान, इजराइल और खाड़ी देशों सभी के साथ अच्छे संबंध हैं। यही संतुलन आज भारत की सबसे बड़ी कूटनीतिक ताकत माना जाता है।

आज का युद्ध केवल रणभूमि तक सीमित नहीं रह गया है। आर्थिक प्रतिबंध, साइबर हमले, सूचना युद्ध, ड्रोन तकनीक और ऊर्जा आपूर्ति भी आधुनिक संघर्ष के महत्वपूर्ण हथियार बन चुके हैं। इसलिए केवल सैनिकों के पीछे हट जाने से शांति स्थापित नहीं हो जाती। यदि आर्थिक और राजनीतिक टकराव जारी रहता है, तो तनाव किसी भी समय फिर लौट सकता है। इतिहास यह भी बताता है कि युद्ध की सबसे बड़ी कीमत हमेशा आम नागरिक चुकाते हैं। चाहे वह ईरान का परिवार हो, इजराइल का नागरिक, लेबनान का किसान या गाजा का बच्चा हर संघर्ष विकास, शिक्षा और भविष्य की संभावनाओं को नुकसान पहुंचाता है। राजनीतिक नेतृत्व बदलते रहते हैं, लेकिन युद्ध के घाव पीढ़ियों तक समाज को प्रभावित करते हैं।

आज पूरी दुनिया की निगाहें इस बात पर टिकी हैं कि आने वाले दिनों में अमेरिका और ईरान बातचीत को किस दिशा में ले जाते हैं। यदि दोनों देश परमाणु कार्यक्रम, आर्थिक प्रतिबंधों और क्षेत्रीय सुरक्षा जैसे कठिन मुद्दों पर व्यावहारिक समझौता कर लेते हैं, तो इसका लाभ केवल दोनों देशों को नहीं, बल्कि पूरी दुनिया को मिलेगा। लेकिन यदि वार्ता फिर अविश्वास की भेंट चढ़ गई, तो यह युद्धविराम भी इतिहास के उन अस्थायी विरामों में शामिल हो जाएगा, जिनके बाद संघर्ष पहले से अधिक तीखा होकर लौटा।

आखिर में एक बात। युद्ध जीतना शायद आसान हो, लेकिन शांति जीतना हमेशा कठिन होता है। मिसाइलों को रोकना संभव है, लेकिन मन में बैठे भय और अविश्वास को मिटाना केवल संवाद, धैर्य और राजनीतिक इच्छाशक्ति से ही संभव है। इसलिए इस युद्धविराम की सफलता इस बात से नहीं आंकी जाएगी कि कितने दिन गोलियां नहीं चलीं, बल्कि इस बात से कि क्या इससे स्थायी भरोसे, क्षेत्रीय स्थिरता और बेहतर भविष्य की नींव रखी जा सकी। यदि ऐसा हुआ, तो यह केवल अमेरिका और ईरान की नहीं, बल्कि पूरी मानवता की जीत होगी।

सुपर मेजॉरिटी की तलाश: बड़े सुधारों के लिए बड़ा जनसमर्थन

सुपर मेजॉरिटी केवल सत्ता विस्तार का प्रश्न नहीं, बल्कि संवैधानिक सुधारों की पूर्वशर्त है। परंतु लोकतंत्र में स्थायी बदलाव व्यापक राजनीतिक सहमति, राज्यों की भागीदारी और जनविश्वास से ही संभव हैं।

भारतीय राजनीति में इन दिनों यह चर्चा तेज है कि सत्ता में होने के बावजूद भारतीय जनता पार्टी और राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (एनडीए) संसद में अपनी संख्या और मजबूत क्यों करना चाहते हैं। इसका उत्तर केवल राजनीतिक विस्तार में नहीं, बल्कि उन संवैधानिक सुधारों में छिपा है जिनके लिए साधारण बहुमत पर्याप्त नहीं होता।

2024 के लोकसभा चुनाव में भाजपा 240 सीटों के साथ सबसे बड़ी पार्टी बनी और एनडीए ने बहुमत के आधार पर सरकार बनाई। किंतु भारतीय संविधान के अनुच्छेद 368 के अनुसार अधिकांश संवैधानिक संशोधनों के लिए दोनों सदनों में विशेष बहुमत आवश्यक होता है। कुछ संशोधनों के लिए आधे से अधिक राज्यों की स्वीकृति भी अनिवार्य है। ऐसे में केवल सरकार बनाना और व्यापक संवैधानिक परिवर्तन कर पाना, दोनों अलग-अलग बातें हैं।

यही कारण है कि परिसीमन, महिला आरक्षण के प्रभावी क्रियान्वयन और एक राष्ट्र-एक चुनाव जैसे विषयों पर सुपर मेजॉरिटी की चर्चा बढ़ी है। हालांकि यह भी स्पष्ट है कि इन सभी मुद्दों पर समान संवैधानिक प्रक्रिया लागू नहीं होती। उदाहरण के लिए, महिला आरक्षण कानून पहले ही पारित हो चुका है, लेकिन उसका क्रियान्वयन भविष्य की जनगणना और उसके बाद होने वाले परिसीमन से जुड़ा है।

परिसीमन का उद्देश्य बदलती जनसंख्या के अनुरूप संसदीय और विधानसभा क्षेत्रों का पुनर्निर्धारण करना है। वहीं एक राष्ट्र-एक चुनाव पर गठित उच्चस्तरीय समिति ने कई संवैधानिक और कानूनी संशोधनों की आवश्यकता बताई है। इसके समर्थक इसे प्रशासनिक दक्षता और चुनावी खर्च में कमी का माध्यम मानते हैं, जबकि आलोचक संघीय ढांचे, क्षेत्रीय प्रतिनिधित्व और लोकतांत्रिक विविधता पर इसके प्रभाव को लेकर गंभीर प्रश्न उठाते हैं।

हाल के वर्षों में विभिन्न दलों के विभाजन और राज्यसभा के बदलते राजनीतिक समीकरणों से एनडीए की स्थिति कुछ मजबूत हुई है। फिर भी संसद के दोनों सदनों में आवश्यक विशेष बहुमत और राज्यों की सहमति जैसी संवैधानिक शर्तें किसी भी बड़े सुधार को चुनौतीपूर्ण बनाती हैं।

लोकतंत्र में संख्या महत्वपूर्ण अवश्य है, लेकिन उससे भी अधिक महत्वपूर्ण व्यापक राजनीतिक सहमति और जनस्वीकृति है। स्थायी संवैधानिक परिवर्तन केवल बहुमत के बल पर नहीं, बल्कि विश्वास, संवाद और राष्ट्रीय सहमति के आधार पर ही सफल होते हैं। इसलिए सुपर मेजॉरिटी की बहस को सत्ता विस्तार के बजाय भारत के भविष्य के संस्थागत सुधारों और लोकतांत्रिक सहमति के व्यापक संदर्भ में देखा जाना चाहिए।

राम मंदिर : इस्तीफों से आगे, जवाबदेही की असली परीक्षा

राम मंदिर चढ़ावा विवाद केवल वित्तीय अनियमितता का मामला नहीं, बल्कि आस्था और संस्थागत विश्वसनीयता की परीक्षा है। इस्तीफों के साथ-साथ प्रभावी जांच, जवाबदेही और पारदर्शी प्रबंधन ही इस संकट का स्थायी समाधान हो सकते हैं।

अयोध्या के राम मंदिर में चढ़ावे की कथित चोरी और उसके बाद श्री राम जन्मभूमि तीर्थ क्षेत्र ट्रस्ट के महासचिव चंपत राय तथा ट्रस्टी अनिल मिश्रा के इस्तीफों ने इस पूरे प्रकरण को केवल वित्तीय अनियमितता तक सीमित नहीं रहने दिया। यह मामला करोड़ों श्रद्धालुओं की आस्था, संस्थागत विश्वसनीयता और जवाबदेह प्रबंधन की कसौटी बन गया है। किसी भी धार्मिक संस्था की सबसे बड़ी पूंजी जनता का विश्वास होता है, और जब उसी विश्वास पर प्रश्नचिह्न लगते हैं, तब केवल पद छोड़ देना पर्याप्त नहीं माना जा सकता।

विवाद बढ़ने पर उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा गठित विशेष जांच दल (एसआईटी) ने चढ़ावे की गणना, नकदी प्रबंधन और अभिलेखों की जांच की। जांच के आधार पर एफआईआर दर्ज हुई और आरोपियों की गिरफ्तारी भी हुई। यद्यपि ट्रस्ट के शीर्ष पदाधिकारियों पर प्रत्यक्ष वित्तीय गड़बड़ी का आरोप नहीं है, फिर भी उनके कार्यकाल में निगरानी व्यवस्था की गंभीर विफलता सामने आई। ऐसे में नैतिक जिम्मेदारी स्वीकार करते हुए दिया गया इस्तीफा स्वागतयोग्य कदम अवश्य है, लेकिन इससे जवाबदेही की प्रक्रिया समाप्त नहीं हो जाती।

सबसे चिंताजनक तथ्य यह है कि चढ़ावे की गणना और सुरक्षा जैसी संवेदनशील प्रक्रिया में पर्याप्त संस्थागत नियंत्रण नहीं था। यदि गणना कक्ष की चाबी सीमित लोगों तक रही, प्रक्रिया में पारदर्शिता का अभाव था और प्रभावी निगरानी व्यवस्था मौजूद नहीं थी, तो यह किसी एक व्यक्ति की नहीं, बल्कि पूरी प्रशासनिक संरचना की कमजोरी को उजागर करता है।

धार्मिक संस्थानों में आने वाला चढ़ावा केवल धनराशि नहीं, बल्कि श्रद्धालुओं के विश्वास का प्रतीक होता है। इसलिए इसके संग्रह, गणना और उपयोग की प्रत्येक प्रक्रिया आधुनिक तकनीक और पारदर्शी प्रणाली के अनुरूप होनी चाहिए। डिजिटल लेखा-जोखा, सीसीटीवी निगरानी, नियमित स्वतंत्र ऑडिट, बहुस्तरीय सत्यापन और समय-समय पर सार्वजनिक वित्तीय रिपोर्ट जैसी व्यवस्थाएं अब विकल्प नहीं, बल्कि अनिवार्यता हैं।

ट्रस्ट के संभावित पुनर्गठन को केवल नए चेहरों की नियुक्ति तक सीमित नहीं रखा जाना चाहिए। यह अवसर ऐसी संस्थागत व्यवस्था विकसित करने का है, जिसमें जवाबदेही व्यक्ति-आधारित नहीं बल्कि व्यवस्था-आधारित हो। यदि इस घटना से सीख लेकर पारदर्शिता, स्वतंत्र निगरानी और सुशासन को प्राथमिकता दी जाती है, तो यह संकट भविष्य के लिए एक सकारात्मक बदलाव का आधार बन सकता है।

राम मंदिर केवल एक धार्मिक स्थल नहीं, बल्कि राष्ट्रीय आस्था का प्रतीक है। उसकी प्रतिष्ठा भव्य निर्माण से नहीं, बल्कि निष्पक्ष, ईमानदार और पारदर्शी प्रबंधन से और अधिक सुदृढ़ होगी। यही करोड़ों श्रद्धालुओं के विश्वास का सम्मान और इस पूरे विवाद से निकलने का सबसे सार्थक मार्ग है।

ब्रिक्स में चीन का समर्थन, बदल रही है कूटनीति?

नई दिल्ली में ब्रिक्स सुरक्षा सलाहकारों की बैठक के दौरान चीन ने भारत की ब्रिक्स अध्यक्षता का समर्थन जताया है। वांग यी और अजीत डोभाल की मुलाकात ने संकेत दिया है कि सीमा विवाद के बावजूद दोनों देश सहयोग के नए रास्ते तलाश रहे हैं।

नई दिल्ली में आयोजित 16वीं ब्रिक्स राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार बैठक के दौरान चीन के विदेश मंत्री वांग यी का बयान अंतरराष्ट्रीय कूटनीति में विशेष महत्व रखता है। उन्होंने भारत की ब्रिक्स अध्यक्षता का समर्थन करते हुए कहा कि चीन भारत के साथ मिलकर काम करने को तैयार है तथा दोनों देशों को अपने संबंधों को दीर्घकालिक और वैश्विक दृष्टिकोण से देखना चाहिए।

यह बयान ऐसे समय आया है जब भारत और चीन के संबंध पिछले कुछ वर्षों में सीमा तनाव के कारण कठिन दौर से गुजरे हैं। वर्ष 2020 के गलवान संघर्ष के बाद दोनों देशों के बीच विश्वास का संकट गहरा गया था। हालांकि हाल के महीनों में दोनों पक्ष संवाद और संपर्क बढ़ाने की दिशा में आगे बढ़े हैं। नई दिल्ली में हुई बैठक के दौरान भारत के राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार अजीत डोभाल और वांग यी ने द्विपक्षीय संबंधों की समीक्षा की तथा संबंधों के क्रमिक सामान्यीकरण की दिशा में हुई प्रगति को स्वीकार किया।

भारत वर्ष 2026 में ब्रिक्स की अध्यक्षता कर रहा है। इस वर्ष की थीम 'बिल्डिंग फॉर रेजिलिएंस, इनोवेशन, कोऑपरेशन एंड सस्टेनेबिलिटी' रखी गई है। भारत की अध्यक्षता में सुरक्षा, आर्थिक सहयोग, वैश्विक शासन सुधार और वैश्विक दक्षिण की भूमिका जैसे मुद्दों को प्राथमिकता दी जा रही है।

ब्रिक्स अब केवल पांच देशों का संगठन नहीं रह गया है। इसमें कई नए सदस्य देशों के शामिल होने के बाद इसकी वैश्विक राजनीतिक और आर्थिक भूमिका बढ़ी है। ऐसे में भारत और चीन जैसे दो बड़े एशियाई देशों के बीच सहयोग पूरे समूह की प्रभावशीलता को प्रभावित करता है। यही कारण है कि वांग यी का समर्थन केवल औपचारिक कूटनीतिक शिष्टाचार नहीं माना जा रहा बल्कि इसे ब्रिक्स के भीतर सामंजस्य बढ़ाने के संकेत के रूप में भी देखा जा रहा है।

हालांकि विशेषज्ञ यह भी मानते हैं कि इस सकारात्मक माहौल के बावजूद सीमा विवाद, व्यापार असंतुलन और रणनीतिक प्रतिस्पर्धा जैसे मुद्दे अभी समाप्त नहीं हुए हैं। स्वयं वांग यी ने भी कहा कि दोनों देशों को संवेदनशील मुद्दों को सावधानी से संभालना चाहिए और सीमा प्रश्न को इस प्रकार प्रबंधित करना चाहिए कि वह समग्र द्विपक्षीय संबंधों पर हावी न हो।

वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में जब विश्व अनेक भू-राजनीतिक संकटों और आर्थिक अनिश्चितताओं का सामना कर रहा है, तब भारत और चीन के बीच संवाद का बढ़ना एशिया और वैश्विक दक्षिण दोनों के लिए महत्वपूर्ण माना जा रहा है। नई दिल्ली की यह बैठक इस बात का संकेत देती है कि प्रतिस्पर्धा के साथ-साथ सहयोग की संभावनाएं भी अभी जीवित हैं। आने वाले महीनों में भारत की ब्रिक्स अध्यक्षता इस दिशा में कितनी सफल होती है, इस पर पूरी दुनिया की नजर रहेगी।

वेनेजुएला की त्रासदी और भारत के लिए चेतावनी

वेनेजुएला का विनाशकारी भूकम्प बताता है कि प्राकृतिक आपदाओं से बचाव का सबसे प्रभावी उपाय पूर्व तैयारी है। सुरक्षित निर्माण, कठोर निगरानी, आधुनिक चेतावनी तंत्र और जागरूक नागरिक ही भविष्य की त्रासदियों को सीमित कर सकते हैं।

24 जून 2026 की शाम वेनेजुएला पर ऐसी आपदा बनकर टूटी, जिसने पूरी दुनिया को झकझोर दिया। मात्र 39 सेकंड के भीतर आए 7.2 और 7.5 तीव्रता के दो शक्तिशाली भूकम्पों ने राजधानी काराकास सहित उत्तरी वेनेजुएला को मलबे में बदल दिया। सैकड़ों लोगों की मौत, हजारों के घायल होने और बड़ी संख्या में लोगों के लापता होने की खबरें केवल एक देश की त्रासदी नहीं, बल्कि पूरी मानवता के लिए चेतावनी है। हर ऐसी आपदा हमें एक ही प्रश्न के सामने खड़ा करती है—क्या हम केवल शोक व्यक्त करेंगे या भविष्य के लिए कुछ सीख भी लेंगे?

प्राकृतिक आपदाओं को रोका नहीं जा सकता, लेकिन उनसे होने वाली तबाही को अवश्य कम किया जा सकता है। वेनेजुएला में भारी जनहानि का एक बड़ा कारण यह भी था कि बड़ी आबादी भूकम्पीय दृष्टि से संवेदनशील क्षेत्रों में रहती है, जबकि अनेक इमारतें तेज झटकों को सहने योग्य नहीं थीं। विकास की चमक तब फीकी पड़ जाती है, जब निर्माण की नींव सुरक्षा के बजाय लापरवाही पर टिकी हो।

इस त्रासदी का एक और चिंताजनक पहलू सूचना व्यवस्था की विफलता रहा। संकट के समय संचार बाधित होने से राहत कार्य प्रभावित हुए और हजारों परिवार अपने प्रियजनों की जानकारी के लिए भटकते रहे। आपदा प्रबंधन केवल बचाव दलों का विषय नहीं है; प्रभावी संचार, आधुनिक चेतावनी प्रणाली और प्रशासनिक पारदर्शिता भी उतनी ही आवश्यक हैं। भारत के लिए यह घटना किसी दूर देश की खबर नहीं, बल्कि भविष्य की चेतावनी है। लातूर, भुज, सुनामी और केदारनाथ जैसी घटनाएं पहले ही बता चुकी हैं कि हमारा बड़ा भूभाग प्राकृतिक आपदाओं के जोखिम वाले क्षेत्रों में है। इसके बावजूद अनेक शहरों में भवन निर्माण नियमों की अनदेखी, घटिया सामग्री का उपयोग और निरीक्षण व्यवस्था की कमजोरियां आज भी चिंता का विषय हैं। यदि सुरक्षा मानकों का कड़ाई से पालन नहीं हुआ, तो भविष्य में किसी भी बड़ी आपदा का मूल्य निर्दोष नागरिकों को अपनी जान देकर चुकाना पड़ सकता है।

अब समय आ गया है कि विकास की परिभाषा बदली जाए। किसी भवन की सफलता उसकी ऊंचाई से नहीं, बल्कि आपदा के समय लोगों की जान बचाने की क्षमता से मापी जानी चाहिए। भवनों का नियमित संरचनात्मक परीक्षण, विद्यालयों और कार्यालयों में मॉक ड्रिल, अस्पतालों की आपदा तैयारी तथा नागरिकों को आपदा प्रबंधन का प्रशिक्षण अनिवार्य बनाया जाना चाहिए। राहत और पुनर्वास पर अरबों रुपये खर्च करने से कहीं अधिक समझदारी पहले से सुरक्षा पर निवेश करने में है।

प्रकृति कभी यह नहीं पूछती कि इमारत कितनी महंगी है या किसने बनाई है। वह केवल उसकी मजबूती की परीक्षा लेती है। इसलिए विकसित भारत की पहचान गगनचुंबी इमारतों से नहीं, बल्कि सुरक्षित भवनों,

जिम्मेदार प्रशासन और जागरूक नागरिकों से होगी। यही वेनेजुएला की त्रासदी का सबसे बड़ा और सबसे महत्वपूर्ण संदेश है।

हर बूंद का फैसला लिखेगा राजस्थान का भविष्य

बारिश के बाद भी प्यास

राकेश गांधी,
वरिष्ठ पत्रकार

राजस्थान ने सूखे भी देखे हैं और रिकॉर्ड बारिश भी। फिर भी भूजल लगातार नीचे जा रहा है। क्या समस्या पानी की कमी है या उसके प्रबंधन की? और यदि आज की प्रवृत्तियां जारी रहीं तो 2040 का राजस्थान कैसा होगा?

साल 2040 का राजस्थान कैसा होगा? क्या तब भी गांवों के कुएं, तालाब और नलकूप जीवन का आधार होंगे या पानी की हर बूंद के लिए संघर्ष और गहरा चुका होगा? क्या शहरों की बढ़ती आबादी और गांवों का घटता भूजल एक नई सामाजिक चुनौती को जन्म देंगे? यह सवाल आज भले भविष्य का लगे, लेकिन इसकी बुनियाद वर्तमान में रखी जा रही है।

राजस्थान में पानी का सवाल नया नहीं है। सदियों से यहां के लोगों ने कम वर्षा और कठिन भौगोलिक परिस्थितियों के बीच जीवन जीना सीखा है। टांकों, बावड़ियों, जोहड़ों और तालाबों की परंपरा इसका प्रमाण है। लेकिन आज का संकट केवल कम बारिश का संकट नहीं है। यह बदलते मौसम, गिरते भूजल स्तर, बढ़ती आबादी, बदलती जीवनशैली और विकास के वर्तमान मॉडल का संयुक्त परिणाम है।

हर साल मानसून आते ही मरुधरा के लोगों की नजरें आसमान पर टिक जाती हैं। किसान से लेकर सरकार तक सभी अच्छी बारिश की उम्मीद करते हैं। लेकिन अब सवाल केवल यह नहीं रह गया है कि बारिश कितनी होगी। असली सवाल यह है कि यदि बारिश हो भी जाए तो क्या हम उस पानी को सहेज पा रहे हैं? और यदि बारिश सामान्य से कम हो जाए तो क्या राजस्थान उसके लिए तैयार है?

राजस्थान की जल कहानी को समझने के लिए हमें वर्तमान से आगे बढ़कर अतीत और भविष्य दोनों को देखना होगा।

राजस्थान : कमी पानी की या प्रबंधन की?

विकास का मॉडल और बढ़ती प्यास

पिछले कुछ दशकों में राजस्थान तेजी से बदला है। शहरों का विस्तार हुआ है। उद्योग बढ़े हैं। पर्यटन और शहरीकरण ने नई मांगें पैदा कीं। इसके साथ ही भूजल पर निर्भरता भी बढ़ी है। आज अनेक क्षेत्रों में जल संकट का कारण केवल कम बारिश नहीं, बल्कि आवश्यकता से अधिक दोहन भी है। भूजल को लंबे समय तक एक ऐसे खजाने की तरह देखा गया जिसे बस निकालते रहना है। लेकिन हर बैंक खाते की तरह भूजल भंडारों की भी एक सीमा होती है। ऐसे में सवाल यह है कि हमने जमीन के भीतर से कितना पानी निकाला और बदले में कितना वापस पहुंचाया?

इस बदलते विकास के बीच एक और अदृश्य संकट आभासी जल व्यापार (वर्चुअल वॉटर ट्रेड) का है। राजस्थान जैसे शुष्क राज्य से जब भारी मात्रा में दूध, कपास व पैकेज्ड फूड बाहर के राज्यों या विदेशों में भेजे जाते हैं, तो अनजाने में हम इन उत्पादों के साथ उनके उत्पादन में लगा करोड़ों लीटर पानी भी निर्यात कर रहे होते हैं। जो राज्य खुद बूंद-बूंद को तरस रहा है, क्या उसकी आर्थिक और औद्योगिक नीतियां इस आभासी जल नुकसान का हिसाब रख रही हैं?

यह सवाल पहली नजर में अटपटा जरूर लग सकता है, लेकिन जल विशेषज्ञों का एक वर्ग मानता है कि यहां की समस्या केवल पानी की उपलब्धता नहीं बल्कि जल प्रबंधन की भी है। हर साल प्रदेश में करोड़ों घनमीटर वर्षा जल आता है, लेकिन इसका एक बड़ा हिस्सा व्यर्थ बहकर निकल जाता है। बहुत कम पानी भूजल भंडारों तक पहुंच पाता है। अनेक क्षेत्रों में जितना पानी जमीन से निकाला जा रहा है उतना वापस पहुंच ही नहीं रहा।

ऐसे में सवाल उठता है कि क्या राजस्थान पानी की कमी से जूझ रहा है या पानी को सहेजने की कमी से?

आधी सदी की कोशिशें, फिर भी संकट क्यों?

पिछले पांच दशकों में सरकारों ने जल संकट से निपटने के लिए अनेक प्रयास किए हैं। बड़े बांध बने। इंदिरा गांधी नहर परियोजना ने पश्चिमी राजस्थान की तस्वीर बदली। ग्रामीण पेयजल योजनाएं शुरू हुईं। वर्षा जल संचयन को बढ़ावा दिया गया। जल जीवन मिशन और मुख्यमंत्री जल स्वावलंबन अभियान जैसी योजनाएं भी सामने आईं। इन प्रयासों ने कई क्षेत्रों को राहत भी पहुंचाई। लाखों लोगों तक पेयजल पहुंचा। नहरों ने रेगिस्तानी इलाकों में नई संभावनाएं पैदा कीं। लेकिन इसके बावजूद जल संकट बार-बार चर्चा का विषय क्यों बनता है?

क्या योजनाओं का प्रभाव जनसंख्या वृद्धि और बढ़ती मांग के सामने कम पड़ गया? क्या भूजल दोहन ने उपलब्धियों को पीछे छोड़ दिया? या फिर हम संकट के मूल कारणों तक पहुंच ही नहीं पाए?

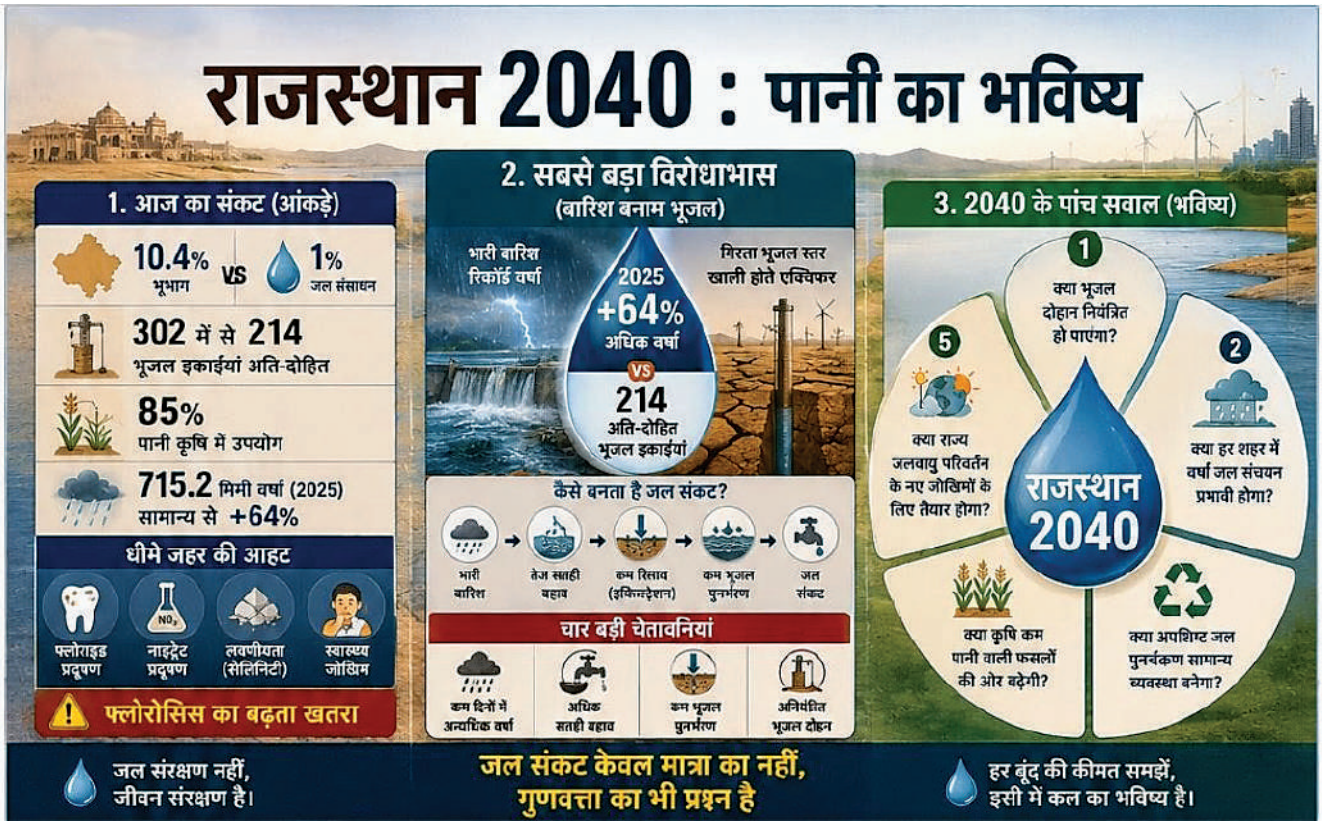

सिकुड़ती जल-धमनियां

यही नहीं, भविष्य की ओर देखते हुए हमारी आज की जल-धमनियां भी सिकुड़ रही हैं। बीसलपुर, जवाई, माही और राणा प्रताप सागर जैसे बड़े बांधों की भराव क्षमता सालों से जमा हो रही गाद (सिल्ट) के कारण लगातार कम हो रही है। मानसून मेहरबान हो तब भी ये जलाशय अब अपनी मूल क्षमता जितना पानी नहीं रोक पाते। हम नए बांधों और परियोजनाओं की बात तो करते हैं, लेकिन जो जलाशय पहले से मौजूद हैं, उनकी गाद निकालकर भंडारण क्षमता बढ़ाने को लेकर कोई व्यापक और दीर्घकालिक नीति दिखाई नहीं देती।

पानी बचाने की संस्कृति कहां खो गई?

जल संकट पर चर्चा होते ही उंगलियां सरकार की ओर उठती हैं। लेकिन क्या समाज भी अपने हिस्से की जिम्मेदारी निभा रहा है? राजस्थान के पूर्वजों ने पानी को बूंद-बूंद सहेजने की संस्कृति विकसित की थी। घरों में टांके बनते रहे हैं। गांवों में तालाबों की सामूहिक देखभाल होती थी। पानी केवल संसाधन नहीं बल्कि जीवन माना जाता था। आज स्थिति बदल चुकी है। अनेक घरों और संस्थानों में वर्षा जल संचयन की व्यवस्था नहीं है। शहरी क्षेत्रों में पानी का अपव्यय भी दिखाई देता है। खेती में भी कई स्थानों पर जल उपयोग की दक्षता चिंता का विषय है।

ऐसे में यह सवाल भी महत्वपूर्ण है कि क्या जल संकट केवल सरकार की विफलता है या समाज की बदलती प्राथमिकताओं का परिणाम भी?

बदल रहा है राजस्थान का जल गणित

मौसम वैज्ञानिक लगातार चेतावनी दे रहे हैं कि वर्षा का स्वरूप बदल रहा है। कई क्षेत्रों में कम दिनों में अत्यधिक वर्षा और लंबे शुष्क अंतराल देखने को मिल रहे हैं। यदि यह प्रवृत्ति आगे बढ़ती है तो जल प्रबंधन की पारंपरिक धारणाएं भी बदलनी पड़ेंगी।

पहले लोग अनुभव के आधार पर मौसम का अनुमान लगा लेते थे। आज मौसम की अनिश्चितता बढ़ती दिखाई दे रही है। यही अनिश्चितता भविष्य के जल संकट को और जटिल बना सकती है।

यदि बारिश धोखा दे जाए तो?

यह सवाल राजस्थान के लिए बहुत मायने रखता है। यदि एक वर्ष कमजोर मानसून रहे तो स्थिति संभाली जा सकती है। लेकिन यदि लगातार दो या तीन वर्षों तक वर्षा सामान्य से कम रहे तो क्या होगा? क्या राज्य के पास पर्याप्त वैकल्पिक व्यवस्था है? क्या जलाशयों और भूजल भंडारों की स्थिति ऐसी है कि लंबे संकट का सामना किया जा सके? क्या शहरी क्षेत्रों और ग्रामीण क्षेत्रों के लिए अलग-अलग आपात योजनाएं तैयार हैं?

इन सवालों के उत्तर भविष्य की तैयारी का वास्तविक पैमाना होंगे। क्योंकि पानी का यह अभाव केवल कंठ सूखने तक सीमित नहीं रहेगा, बल्कि यह जलवायु विस्थापन की एक डरावनी आहट भी है। जब गांवों का भूजल स्तर पूरी तरह जवाब दे जाएगा, तो आबादी का शहरों की तरफ पलायन अपूर्व रूप से बढ़ेगा। क्या हमारे बड़े शहर जल-शरणार्थियों के इस बोझ और उससे पैदा होने वाले सामाजिक-शहरी असंतुलन को संभालने के लिए तैयार हैं?

राजस्थान 2040 : तीन संभावित तस्वीरें

पहली तस्वीर संघर्ष के राजस्थान की है।... यदि वर्तमान प्रवृत्तियां जारी रहीं तो 2040 का राजस्थान अधिक जल दबाव वाले प्रदेश के रूप में सामने आ सकता है। भूजल और नीचे जा सकता है। अनेक गांव टैंकरों पर निर्भर हो सकते हैं। शहरों में जल आपूर्ति पर दबाव बढ़ सकता है और जल विवाद नए रूप ले सकते हैं।

दूसरी तस्वीर जल-स्मार्ट राजस्थान की है।... यदि सरकार, समाज और तकनीक मिलकर जल संरक्षण को जन आंदोलन बना दें, वर्षा जल संचयन व्यापक स्तर पर लागू हो, भूजल पुनर्भरण को प्राथमिकता मिले और जल उपयोग की दक्षता बढ़े, तो राजस्थान देश के लिए जल प्रबंधन का मॉडल बन सकता है।

तीसरी तस्वीर सबसे चिंताजनक है।... यदि जलवायु परिवर्तन के प्रभाव तेज हुए, भूजल दोहन नहीं रुका और संरक्षण के प्रयास पर्याप्त नहीं हुए तो अनेक क्षेत्रों में जल संकट गंभीर सामाजिक और आर्थिक चुनौती का रूप ले सकता है।

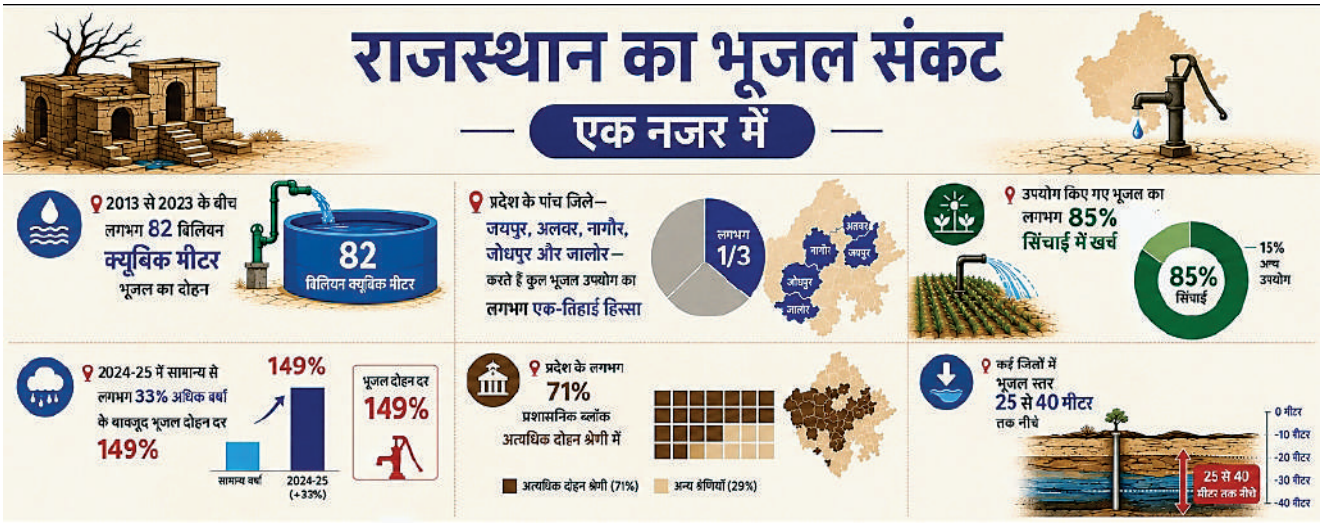

क्या खत्म हो रहा है धरती का जल भंडार?

मनीष गोधा,
वरिष्ठ पत्रकार

राजस्थान का जल संकट केवल कम बारिश का परिणाम नहीं है। बदलती जीवनशैली, भूजल का अंधाधुंध दोहन, अनियोजित शहरीकरण और पानी की बढ़ती मांग ने स्थिति को गंभीर बना दिया है। विडंबना यह है कि सामान्य से अधिक बारिश वाले वर्षों में भी प्रदेश भूजल दोहन में देश में सबसे ऊपर बना हुआ है।

पानी की हर बूंद पर बढ़ती जंग

राजस्थान सदियों से पानी की कमी के साथ जीना सीखता आया है। रेगिस्तान, सीमित नदियां और कम वर्षा यहां की भौगोलिक पहचान रहे हैं। लेकिन आज का संकट पहले से अलग है। पहले पानी कम था, मगर उसका उपयोग संयमित था। आज तकनीक, शहरीकरण और बदलती जीवनशैली ने पानी की मांग को कई गुना बढ़ा दिया है।

प्रदेश में सतही जल के नाम पर चंबल जैसी सीमित नदियां हैं। दूसरी ओर भूजल लगातार नीचे जा रहा है। कई क्षेत्रों में उपलब्ध पानी खारा या फ्लोराइड युक्त है। ऐसे में सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि उपलब्ध पानी का उपयोग किसे प्राथमिकता देकर किया जाएक्षपेयजल, खेती, उद्योग या बढ़ते शहरों की जरूरतों को?

यह केवल जल प्रबंधन का सवाल नहीं, बल्कि राजस्थान के भविष्य का प्रश्न बन चुका है।

बदल गई जीवनशैली, बढ़ गया संकट

राजस्थान ने अकाल और सूखे के अनेक दौर देखे हैं। फिर भी समाज ने पारंपरिक जल संरक्षण प्रणालियों के माध्यम से जीवन को आगे बढ़ाया। घरों में टांके, गांवों में जोहड़, बावड़ियां और तालाब केवल संरचनाएं नहीं थे, बल्कि जीवन का आधार थे।

एक समय गांवों में कहा जाता था—'घी ढुल जाए तो कोई बात नहीं, पानी नहीं ढुलना चाहिए।'

आज परिस्थितियां बदल चुकी हैं।

कंक्रीट के फैलते जंगलों ने वर्षा जल के प्राकृतिक पुनर्भरण को बाधित कर दिया है। जहां पहले बारिश का पानी जमीन में समा जाता था, अब वह नालों और सीवर लाइनों से बहकर निकल जाता है। ट्यूबवेल और सबमर्सिबल पंपों ने भूजल निकालना आसान बना दिया है, लेकिन उसकी भरपाई के लिए समानांतर प्रयास नहीं हुए।

परिणाम सामने है—पानी का स्तर लगातार नीचे जा रहा है।

विकास बनाम जल सुरक्षा

- आर्थिक विकास और बेहतर जीवन सुविधाएं हर समाज की जरूरत हैं, लेकिन कई बार विकास की वर्तमान दिशा जल संसाधनों पर अतिरिक्त दबाव पैदा कर देती है।
- कम वर्षा वाले क्षेत्रों में अधिक पानी मांगने वाली फसलों का विस्तार हुआ। शहरों का फैलाव बढ़ा। सड़कों, कॉलोनियों और औद्योगिक क्षेत्रों ने प्राकृतिक जलग्रहण क्षेत्रों को प्रभावित किया। बढ़ते तापमान ने शीतलन की जरूरत बढ़ाई, जिससे ऊर्जा और जल दोनों पर अप्रत्यक्ष दबाव पड़ा।
- समस्या यह नहीं कि विकास हो रहा है। समस्या यह है कि विकास और जल उपलब्धता के बीच संतुलन लगातार कमजोर पड़ रहा है।

क्यों खतरनाक है गिरता भूजल?

भूजल केवल पानी का स्रोत नहीं, बल्कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। जैसे-जैसे जल स्तर नीचे जाता है, पानी निकालने की लागत बढ़ती जाती है। किसानों को अधिक गहराई तक बोरिंग करवानी पड़ती है। बिजली की खपत बढ़ती है। सिंचाई महंगी होती है।

कई स्थानों पर खेती लाभकारी नहीं रह जाती। इसका असर केवल खेत तक सीमित नहीं रहता। जल संकट से रोजगार घटता है, पलायन बढ़ता है और ग्रामीण सामाजिक संरचना प्रभावित होती है। कई अध्ययन संकेत देते हैं कि पानी की कमी वाले क्षेत्रों से शहरों की ओर पलायन लगातार बढ़ रहा है।

शहरों की बढ़ती प्यास... राजस्थान का जल संकट केवल गांवों की समस्या नहीं है। सबसे बड़ी चुनौती अब तेजी से बढ़ते शहर हैं।

जयपुर: बढ़ती आबादी, सीमित स्रोत... राजधानी जयपुर की जलापूर्ति का बड़ा हिस्सा बीसलपुर बांध पर निर्भर है। मुख्य पाइपलाइन पुरानी हो चुकी है और बार-बार लीकेज की समस्या सामने आती है। शहर के अंतिम छोर वाले क्षेत्रों में गर्मियों के दौरान पानी का दबाव कम हो जाता है। भूजल स्तर लगातार नीचे जा रहा है और कई इलाकों में फ्लोराइड तथा टीडीएस की मात्रा चिंता का विषय बन चुकी है।

जोधपुर: नहर पर निर्भर जीवन... जोधपुर और आसपास के क्षेत्रों की पेयजल व्यवस्था मुख्यतः इंदिरा गांधी नहर पर आधारित है। नहर बंद होने या मरम्मत के दौरान पूरा क्षेत्र संकट में आ जाता है। इसके साथ ही भूजल का खारापन और फ्लोराइड समस्या को और गंभीर बना देता है।

कोटा: बढ़ती आबादी का दबाव... कोचिंग हब के रूप में विकसित कोटा में मौसमी आबादी तेजी से बढ़ती है। गर्मियों में मांग और आपूर्ति का अंतर स्पष्ट दिखाई देता है। पुराने वितरण नेटवर्क और लीकेज से बड़ी मात्रा में पानी नष्ट होता है।

अजमेर, उदयपुर और बीकानेर... अजमेर बीसलपुर पर निर्भर है, जबकि उदयपुर की झीलों पर बढ़ता दबाव चिंता का विषय है। बीकानेर जैसे शहरों में इंदिरा गांधी नहर पर निर्भरता जल सुरक्षा को संवेदनशील बनाती है।

खेती में पानी की सबसे बड़ी खपत

राजस्थान में उपलब्ध जल का सबसे बड़ा हिस्सा कृषि क्षेत्र उपयोग करता है। इसलिए जल संकट का समाधान भी कृषि से ही होकर गुजरता है।

विशेषज्ञ मानते हैं कि यदि सिंचाई दक्षता बढ़ा दी जाए तो बड़ी मात्रा में पानी बचाया जा सकता है। ड्रिप सिंचाई, स्प्रिंकलर, नमी संरक्षण, मल्चिंग, जैविक पदार्थों का उपयोग और सटीक फसल प्रबंधन जैसी तकनीकें पानी की खपत को काफी कम कर सकती हैं। विशेष रूप से उन क्षेत्रों में जहां भूजल संकट गंभीर है, वहां कम पानी वाली फसलों को बढ़ावा देना समय की आवश्यकता बन गया है।

क्या बिना पानी के भी खेती संभव है?

पूरी तरह बिना पानी के नहीं, लेकिन बहुत कम पानी में खेती आज वास्तविकता बन चुकी है।

हाइड्रोपोनिक्स... इस तकनीक में मिट्टी की जगह पोषक तत्वों से युक्त घोल का उपयोग किया जाता है। नियंत्रित वातावरण में कम पानी में बेहतर उत्पादन संभव होता है।

एरोपोनिक्स... इस पद्धति में पौधों की जड़ों पर पोषक तत्वों की धुंध का छिड़काव किया जाता है। इसमें पारंपरिक खेती की तुलना में 90 प्रतिशत तक पानी बचाया जा सकता है।

ड्राईलैंड एग्रोफॉरेस्ट्री... राजस्थान के कुछ किसानों ने ऐसे प्रयोग किए हैं जिनमें पौधों को शुरुआती चरण में बहुत सीमित पानी देकर वर्षा आधारित विकास संभव बनाया गया है।

उम्मीद की मिसालें... सीकर जिले के दाता गांव के किसान सुंडाराम वर्मा ने कम पानी में पौधों के विकास की तकनीक विकसित कर राष्ट्रीय स्तर पर पहचान बनाई है।

झुंझुनूं जिले की देवरोड ग्राम पंचायत ने भी सामुदायिक स्तर पर उल्लेखनीय उदाहरण प्रस्तुत किया है। यहां मुक्तिधाम की लगभग आठ हेक्टेयर भूमि पर हजारों पौधे लगाकर पर्यावरण संरक्षण और भूजल संवर्धन की दिशा में प्रयास किए गए हैं।

ये उदाहरण बताते हैं कि इच्छाशक्ति और स्थानीय नवाचार से कठिन परिस्थितियों में भी सकारात्मक बदलाव संभव है।

क्या किया जाना चाहिए?

1. **वर्षा जल संचयन अनिवार्य बनें:** हर शहरी भवन और संस्थान में प्रभावी रेन वाटर हार्वेस्टिंग व्यवस्था लागू हो।
2. **भूजल दोहन पर सख्त निगरानी:** अंधाधुंध बोरवेल और अवैध दोहन पर नियंत्रण जरूरी है।
3. **जलग्रहण क्षेत्रों का संरक्षण:** तालाब, जोहड़, नाड़ियां और पारंपरिक जल संरचनाओं का पुनर्जीवन किया जाए।
4. **कृषि में जल दक्षता:** ड्रिप और स्प्रिंकलर जैसी तकनीकों को बड़े पैमाने पर अपनाया जाए।
5. **शहरों में जल हानि कम हो:** पुरानी पाइपलाइनें बदले, लीकेज नियंत्रण पर विशेष ध्यान दिया जाए।
6. **जनजागरूकता को आंदोलन बनाया जाए:** जल संरक्षण केवल सरकारी योजना नहीं, सामाजिक व्यवहार का हिस्सा बने।

समय अभी भी है

राजस्थान का जल संकट केवल प्रकृति की देन नहीं है। यह हमारी विकास नीतियों, उपभोग की आदतों और संसाधनों के प्रबंधन का भी परिणाम है। अच्छी बात यह है कि समाधान हमारे पास मौजूद हैं—पारंपरिक ज्ञान के रूप में भी और आधुनिक तकनीक के रूप में भी।

प्रश्न पानी की उपलब्धता का नहीं, बल्कि उसके विवेकपूर्ण उपयोग का है।

रेगिस्तान में रहने वाली पिछली पीढ़ियों ने सीमित पानी में जीवन जीने की कला विकसित की थी। आज की पीढ़ी के सामने चुनौती उस विरासत को आधुनिक तकनीक के साथ जोड़ने की है। यदि ऐसा नहीं हुआ, तो आने वाले वर्षों में राजस्थान के सामने सबसे बड़ी चुनौती रोजगार, कृषि या उद्योग नहीं, बल्कि पीने का पानी होगा।

पानी की लड़ाई भविष्य की नहीं, वर्तमान की कहानी है।

तालों में कैद पानी, टैंकरों के भरोसे जिंदगी

धर्मसिंह भाटी,
वरिष्ठ पत्रकार

राजस्थान के बाड़मेर और जैसलमेर में करोड़ों रुपये की जल योजनाओं और नल कनेक्शनों के बावजूद पेयजल संकट बरकरार है। कई गांव आज भी टैंकरों, टांकों और पारंपरिक जलस्रोतों पर निर्भर हैं। सीमावर्ती क्षेत्रों में लोग पानी के लिए लंबी दूरी तय करते हैं और संग्रहित पानी को ताले लगाकर सुरक्षित रखते हैं।

राजस्थान के पश्चिमी रेगिस्तानी जिले बाड़मेर और जैसलमेर आज भी पेयजल संकट की गंभीर चुनौती से जूझ रहे हैं। विकास योजनाओं, लंबी पाइपलाइन परियोजनाओं और करोड़ों रुपये के निवेश के बावजूद बड़ी आबादी को नियमित और पर्याप्त पेयजल उपलब्ध नहीं हो पा रहा है। यहां पानी की कमी कोई मौसमी समस्या नहीं, बल्कि जीवन की स्थायी वास्तविकता बन चुकी है।

वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार बाड़मेर की आबादी लगभग 26 लाख और जैसलमेर की करीब 6.7 लाख है। देश के सबसे कम वर्षा वाले क्षेत्रों में शामिल इन जिलों में औसत वार्षिक वर्षा क्रमशः लगभग 280-300 मिमी और 180-200 मिमी के बीच रहती है। विशाल भौगोलिक क्षेत्र, बिखरी हुई आबादी और कठोर जलवायु के कारण यहां पेयजल उपलब्ध कराना हमेशा चुनौतीपूर्ण रहा है। गर्मियों में तापमान 45 से 50 डिग्री सेल्सियस तक पहुंच जाता है और ऐसे समय में ग्रामीणों का बड़ा हिस्सा पानी जुटाने तथा उसे सहेजकर रखने में अपना अधिकांश समय खर्च करता है।

जब नाड़ी और बावड़ियां थीं जीवनरेखा

एक समय था जब रेगिस्तानी क्षेत्रों में नाड़ी, तालाब, कुएं, बावड़ियां, बेरियां और टांके जल संरक्षण के प्रमुख साधन हुआ करते थे। ग्रामीण समाज इन जलस्रोतों की नियमित देखभाल करता था और इन्हीं के सहारे वर्षभर पानी की जरूरत पूरी होती थी।

लेकिन आधुनिक जलापूर्ति योजनाओं पर बढ़ती निर्भरता के साथ पारंपरिक जलस्रोतों का संरक्षण कमजोर पड़ता गया। परिणामस्वरूप अनेक नाड़ियां, बावड़ियां और तालाब धीरे-धीरे अस्तित्व खोते चले गए। कई कुएं सूख गए तो कई जलस्रोत मिट्टी से भरकर उपयोगहीन हो गए।

आज जब सरकारी जलापूर्ति व्यवस्था कई क्षेत्रों में अपेक्षित परिणाम नहीं दे पा रही है, तब लोगों को इन पारंपरिक प्रणालियों की उपयोगिता फिर से समझ में आने लगी है। जल विशेषज्ञ मानते हैं कि रेगिस्तानी इलाकों में जल संकट का स्थायी समाधान पारंपरिक ज्ञान और आधुनिक तकनीक के समन्वय में ही निहित है।

नल पहुंचे, लेकिन पानी नहीं

ग्रामीण क्षेत्रों में हर घर तक नल से पानी पहुंचाने के उद्देश्य से शुरू किए गए जल जीवन मिशन के तहत बाड़मेर और जैसलमेर में व्यापक स्तर पर कार्य किए गए। पाइपलाइनें बिछाई गईं, जलाशय बनाए गए और हजारों घरों तक नल कनेक्शन पहुंचाए गए।

लेकिन जमीनी तस्वीर कई जगह अलग दिखाई देती है। अनेक गांवों में बने ग्राउंड लेवल रिजर्वायर (जीएलआर) खाली पड़े हैं और नल कनेक्शन मिलने के बावजूद सप्ताह में केवल एक-दो बार ही जलापूर्ति हो रही है। ग्रामीणों का कहना है कि ढांचा तो खड़ा हो गया, लेकिन नियमित आपूर्ति अब भी बड़ी चुनौती बनी हुई है।

यहीं सबसे बड़ा सवाल खड़ा होता है कि जब जल जीवन मिशन पर करोड़ों रुपये खर्च किए गए, तो फिर अनेक गांवों में नियमित जलापूर्ति क्यों नहीं हो पा रही? क्या समस्या पाइपलाइन नेटवर्क की है, रखरखाव की है, या फिर मूल जलस्रोतों की उपलब्धता ही पर्याप्त नहीं है?

स्थानीय स्तर पर यह शिकायत लगातार सामने आती रही है कि कई स्थानों पर पाइपलाइन तो बिछ गई, लेकिन पर्याप्त जलस्रोत, पंपिंग व्यवस्था या भंडारण क्षमता विकसित नहीं हो सकी। कुछ परियोजनाएं अब भी अधूरी हैं, जबकि कई जगहों पर स्थापित संरचनाएं अपनी निर्धारित क्षमता से संचालित नहीं हो रहीं।

जल जीवन मिशन के मानकों के अनुसार प्रत्येक ग्रामीण व्यक्ति को प्रतिदिन 55 लीटर पेयजल उपलब्ध कराया जाना चाहिए, लेकिन कई दूरस्थ और सीमावर्ती गांवों में लोग आज भी नियमित आपूर्ति के लिए इंतजार करते हैं। कागजों पर दर्ज उपलब्धियों और जमीन पर उपलब्ध पानी के बीच का यही अंतर सवाल खड़े करता है।

सीमा पर प्यास का संघर्ष

- भारत-पाकिस्तान सीमा से सटे गांवों में स्थिति और अधिक गंभीर है। बाड़मेर जिले के गफन क्षेत्र सहित अनेक सीमावर्ती बस्तियों में लोगों को पेयजल के लिए लंबी दूरी तय करनी पड़ती है। कई परिवारों में महिलाओं और बच्चों का बड़ा हिस्सा दिन का अधिकांश समय पानी जुटाने में बीतता है।
- गर्मी के मौसम में भूजल स्तर और नीचे चला जाता है, जिससे संकट और गहरा जाता है। ऐसे समय में टैंकरों के माध्यम से जलापूर्ति की जाती है, लेकिन मांग के मुकाबले यह व्यवस्था अक्सर अपर्याप्त साबित होती है। कई गांवों में लोगों को पानी के लिए कई दिनों तक प्रतीक्षा करनी पड़ती है।

जब पानी की रखवाली करते हैं ताले

सीमावर्ती गांवों में पानी की कीमत किसी अनमोल संपत्ति से कम नहीं है। यहां अधिकांश परिवारों ने अपनी-अपनी बेरियां बना रखी हैं, जिनमें पानी संग्रहित किया जाता है।

इन बेरियों पर ताले लगाए जाते हैं ताकि संग्रहित पानी सुरक्षित रहे और कोई दूसरा व्यक्ति उसका उपयोग न कर सके। वर्षों पुरानी यह परंपरा आज भी अनेक गांवों में जीवित है। यह दृश्य बताता है कि रेगिस्तान में पानी महज संसाधन नहीं, बल्कि जीवन की सबसे मूल्यवान पूंजी है।

जहां देश के अनेक हिस्सों में पानी सहज उपलब्ध है, वहीं यहां उसकी हर बूंद की निगरानी और सुरक्षा करनी पड़ती है।

प्यास बुझाने का महंगा विकल्प

गर्मी बढ़ने और नियमित जलापूर्ति प्रभावित होने पर निजी टैंकर ही लोगों का प्रमुख सहारा बन जाते हैं। ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में टैंकरों की मांग तेजी से बढ़ जाती है।

एक टैंकर पानी के लिए लोगों को सैकड़ों से लेकर हजारों रुपये तक खर्च करने पड़ते हैं। आर्थिक रूप से कमजोर परिवारों के लिए यह अतिरिक्त बोझ बन जाता है। कई परिवारों को अन्य आवश्यक खर्चों में कटौती कर पानी खरीदना पड़ता है। इसका सीधा असर उनके जीवन स्तर और घरेलू अर्थव्यवस्था पर पड़ता है।

भूजल भी दे रहा चेतावनी

सतही जल की कमी के बीच भूजल पर निर्भरता लगातार बढ़ी है, लेकिन अब भूजल भी संकट के संकेत दे रहा है। केंद्रीय भूजल बोर्ड और विभिन्न अध्ययनों के अनुसार बाड़मेर के कई क्षेत्रों में पिछले वर्षों के दौरान भूजल स्तर में लगातार गिरावट दर्ज की गई है। कुछ इलाकों में 7 से 18 मीटर तक जलस्तर नीचे जाने की जानकारी सामने आई है।

विशेषज्ञों का मानना है कि सीमित वर्षा, बढ़ता दोहन और जल पुनर्भरण की अपर्याप्त व्यवस्था के कारण भूजल पर दबाव लगातार बढ़ रहा है। यदि यही स्थिति बनी रही तो आने वाले वर्षों में संकट और गहरा सकता है।

पुराने नलकूप फिर बने सहारा

जल संकट के बीच जलदाय विभाग को भी पुराने जलस्रोतों की उपयोगिता का अहसास होने लगा है। बाड़मेर शहर में नहरी पानी की आपूर्ति शुरू होने से पहले भाड़खा गांव के ट्यूबवेलों से जलापूर्ति की जाती थी।

नहरी परियोजनाओं के बाद इन नलकूपों का महत्व कम हो गया था, लेकिन हाल के वर्षों में नहरी जलापूर्ति प्रभावित होने पर इन्हें फिर से विकसित किया जा रहा है। विभाग इन्हें वैकल्पिक जलस्रोत के रूप में तैयार कर रहा है ताकि आपात स्थिति में शहर और आसपास के क्षेत्रों को पानी उपलब्ध कराया जा सके।

टांकों में सहेजा जाता है पूरा साल

बाड़मेर और जैसलमेर की एक विशिष्ट पहचान यहां के टांके हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में शायद ही कोई ऐसा घर हो जहां वर्षाजल संग्रहण के लिए टांका न बना हो। अनेक परिवारों के पास दो से तीन टांके तक हैं।

मानसून के दौरान घरों की छतों, आंगनों और कैचमेंट क्षेत्रों से एकत्रित पानी को इन टांकों में संग्रहित किया जाता है। यही पानी पूरे वर्ष पेयजल के रूप में उपयोग किया जाता है। आज भी अनेक परिवार वर्षाजल को सबसे भरोसेमंद और सुरक्षित पेयजल स्रोत मानते हैं।

हालांकि कमजोर मानसून वाले वर्षों में टांके पर्याप्त नहीं भर पाते, जिससे पूरे वर्ष जल संकट बना रहता है।

सरकार का दावा और चुनौतियां

सरकार का कहना है कि पश्चिमी राजस्थान के रेगिस्तानी क्षेत्रों में जलापूर्ति देश के सबसे कठिन कार्यों में से एक है। विशाल दूरी, बिखरी आबादी, सीमित स्थानीय जलस्रोत और कठोर भौगोलिक परिस्थितियां योजनाओं के क्रियान्वयन को चुनौतीपूर्ण बनाती हैं।

सरकारी आंकड़ों के अनुसार जल जीवन मिशन के तहत बड़ी संख्या में घरों तक नल कनेक्शन पहुंचाए गए हैं और कई नई पेयजल परियोजनाओं पर कार्य जारी है। जैसलमेर सहित पश्चिमी राजस्थान में बड़े जलाशयों, पंपिंग स्टेशनों और पाइपलाइन नेटवर्क के विस्तार पर भी निवेश किया जा रहा है।

अधिकारियों का तर्क है कि कई क्षेत्रों में समस्या योजनाओं की कमी नहीं, बल्कि जलस्रोतों की सीमित उपलब्धता और लंबी दूरी तक पानी पहुंचाने की तकनीकी चुनौतियां हैं। उनका दावा है कि चरणबद्ध तरीके से आपूर्ति व्यवस्था को और मजबूत किया जा रहा है।

पानी की कमी से पशुपालन पर चोट

पश्चिमी राजस्थान की अर्थव्यवस्था में पशुपालन की महत्वपूर्ण भूमिका है। हजारों परिवार गाय, भैंस, ऊंट, भेड़ और बकरियों के पालन से अपनी आजीविका चलाते हैं।

जल संकट का सीधा असर पशुधन पर भी पड़ता है। कई स्थानों पर पशुओं को दिन में केवल एक बार पानी पिलाया जाता है, जबकि गंभीर परिस्थितियों में एक दिन छोड़कर दूसरे दिन पानी देने की नौबत आ जाती है। इसका असर पशुओं के स्वास्थ्य और दुग्ध उत्पादन दोनों पर पड़ता है, जिससे पशुपालकों की आय प्रभावित होती है।

समाधान की राह कहां है?

रेगिस्तानी जिलों में जल संकट का समाधान केवल नई योजनाओं और पाइपलाइनों तक सीमित नहीं हो सकता। इसके लिए पारंपरिक जलस्रोतों के पुनर्जीवन, वर्षाजल संग्रहण को बढ़ावा देने, भूजल संरक्षण और स्थानीय स्तर पर प्रभावी जल प्रबंधन की आवश्यकता है।

साथ ही यह भी जरूरी है कि जल जीवन मिशन जैसी योजनाओं का स्वतंत्र मूल्यांकन किया जाए। यह स्पष्ट होना चाहिए कि कितनी परियोजनाएं समय पर पूरी हुईं, कितनी अधूरी हैं, पाइपलाइन क्षमता और वास्तविक जलापूर्ति में कितना अंतर है तथा रखरखाव पर कितना ध्यान दिया जा रहा है।

सवाल केवल पानी की उपलब्धता का नहीं, बल्कि योजनाओं की प्रभावशीलता और क्रियान्वयन का भी है। यदि करोड़ों रुपये खर्च होने के बावजूद लोगों को टैंकरों, टांकों और बंद बेरियों पर निर्भर रहना पड़ रहा है, तो यह व्यवस्था की वास्तविक स्थिति पर गंभीर प्रश्न खड़े करता है।

पश्चिमी राजस्थान के लिए चुनौती केवल नई परियोजनाएं शुरू करने की नहीं, बल्कि यह सुनिश्चित करने की है कि पाइपलाइन से निकलने वाला पानी वास्तव में हर घर तक पहुंचे। विकास के दावों और जमीनी हकीकत के बीच मौजूद यही अंतर आज बाड़मेर और जैसलमेर के जल संकट की सबसे बड़ी कहानी है।

मरुभूमि की वह बुद्धिमत्ता, जो आज भी भविष्य का रास्ता दिखाती है

जल वैभव की विरासत

बलवंत राज मेहता,
वरिष्ठ व्यंग्यकार

राजस्थान की जल विरासत केवल इतिहास का गौरव नहीं, बल्कि भविष्य का मार्गदर्शन है। मरुभूमि में विकसित बावड़ियां, जोहड़, तालाब और झीलें बताती हैं कि जल संरक्षण केवल तकनीक नहीं, बल्कि संस्कृति, सामुदायिक चेतना और दूरदृष्टि का परिणाम है।

राजस्थान की कहानी केवल रेत, किलों और रणबांकुरों की कहानी नहीं है, यह पानी के साथ मनुष्य के उस संघर्ष की गाथा भी है जिसमें हर बूंद एक विजय थी। जिस धरती पर आसमान अक्सर कंजूस साबित होता रहा, वहां लोगों ने पानी को खर्च करने की नहीं, पूजने और बचाने की संस्कृति विकसित की।

यदि भारत की सभ्यता को एक विशाल वृक्ष माना जाए, तो राजस्थान उसका वह हिस्सा है जिसने सबसे कम पानी पाकर भी सबसे गहरी जड़ें जमाईं। यहां जल केवल जीवन का साधन नहीं रहा, बल्कि दूरदृष्टि, अनुशासन और सामुदायिक चेतना का प्रतीक बन गया। मरुस्थल की तपती छाती पर बनी बावड़ियां, जोहड़, तालाब और झीलें दरअसल पत्थरों में लिखी हुई वे कविताएं हैं, जो मनुष्य और प्रकृति के संवाद का अमर दस्तावेज़ हैं।

कहते हैं कि किसी समाज की असली पहचान इस बात से होती है कि वह अपने सबसे दुर्लभ संसाधन के साथ कैसा व्यवहार करता है। राजस्थान ने पानी को केवल उपयोग की वस्तु नहीं माना, बल्कि उसने उसे सम्मान दिया, स्मृति दी और संस्कृति में स्थान दिया। यही कारण है कि यहां जल संरक्षण लोकजीवन का संस्कार बन गया। गांवों में बच्चे पानी बचाने की सीख के साथ बड़े होते थे, महिलाएं जल स्रोतों को घर की तरह संवारती थीं और समुदाय वर्षा से पहले तालाबों की मरम्मत को उत्सव की तरह निभाता था।

आज जब देश के अनेक शहर जल संकट की आशंका से घिरे हैं, भूजल लगातार नीचे जा रहा है और जलवायु परिवर्तन वर्षा के पुराने चक्र को बदल रहा है, तब राजस्थान की यह विरासत किसी संग्रहालय की वस्तु नहीं लगती। वह हमारे सामने एक प्रश्न की तरह खड़ी है, क्या आधुनिक समाज ने प्रगति की दौड़ में पानी के प्रति वह सम्मान खो दिया है, जिसने सदियों तक मरुभूमि में जीवन को संभव बनाया था?

एक बूंद की कीमत

जैसलमेर के एक बुजुर्ग ग्रामीण अपने बचपन की स्मृतियां सुनाते हुए कहते हैं कि गर्मियों में गांव की महिलाएं सुबह सूरज निकलने से पहले नाड़ी पर पहुंच जाती थीं। पानी भरना केवल घरेलू काम नहीं था; वह अनुशासन था, जिम्मेदारी थी और जीवन की निरंतरता का प्रतीक था। बच्चों को सिखाया जाता था कि घड़े से पानी छलकना भी लापरवाही है, क्योंकि मरुभूमि में हर बूंद का अपना महत्व होता है।

यह कहानी केवल एक व्यक्ति की नहीं, बल्कि उस सामूहिक चेतना की है जिसने राजस्थान में जल संरक्षण को जीवन शैली बना दिया। लोगों ने देखा था कि पानी का अभाव क्या होता है, इसलिए उन्होंने उसके संरक्षण को संस्कृति का रूप दे दिया।

अभाव से उपजा जल का दर्शन

राजस्थान का जल इतिहास दरअसल अभाव को पराजित करने की कहानी है। यह उस समाज की कथा है जिसने प्रकृति से शिकायत करने के बजाय उसके स्वभाव को समझा और उसके अनुरूप अपना जीवन गढ़ लिया। जहां देश के अनेक हिस्सों में नदियां सभ्यता की पालना बनीं, वहीं राजस्थान ने वर्षा की क्षणिक बूंदों को ही अपनी नदियों का दर्जा दे दिया। यहां बादल मेहमान की तरह आते थे, इसलिए उनके स्वागत की तैयारी पूरे वर्ष चलती थी। हर तालाब एक तिजोरी था, हर बावड़ी एक बैंक थी और हर जोहड़ भविष्य के लिए किया गया निवेश।

तत्कालीन शासकों ने समझ लिया था कि किसी राज्य की वास्तविक शक्ति उसकी सेना नहीं, उसके जलस्रोत होते हैं। इसलिए नगर बसाने से पहले पानी का इंतजाम किया जाता था। किलों की दीवारों जितना ही महत्व तालाबों के घाटों को दिया जाता था। यह स्पष्ट था कि बिना जल के वैभव केवल भ्रम है।

लेकिन राजस्थान की जल गाथा केवल राजाओं की नहीं है। यह समाज की साझी बुद्धिमत्ता का इतिहास है। रानियों ने बावड़ियां बनवाईं, व्यापारियों ने तालाब खुदवाए, संतों ने जल संरक्षण को पुण्य से जोड़ा और ग्रामीण समुदायों ने पीढ़ियों तक इन संरचनाओं की रक्षा की।

जल संरचनाएं : मरुभूमि की बुद्धिमत्ता

राजस्थान की जल विरासत का सबसे आकर्षक पक्ष उसकी विविध जल संरचनाएं हैं। ये संरचनाएं केवल तकनीकी समाधान नहीं थीं, बल्कि स्थानीय भूगोल, जलवायु और समाज की आवश्यकताओं को समझकर विकसित की गई थीं।

बावड़ियां : पत्थरों में उतरा जल दर्शन

बावड़ियां राजस्थान की सबसे विशिष्ट जल संरचनाओं में गिनी जाती हैं। सीढ़ियों के माध्यम से जल स्तर तक पहुंचने वाली ये संरचनाएं जल संग्रहण के साथ-साथ यात्रियों के विश्राम, सामाजिक मेल-मिलाप और सांस्कृतिक गतिविधियों का केंद्र भी थीं। गहराई में उतरती सीढ़ियां मानो यह संदेश देती थीं कि पानी तक पहुंचने के लिए धैर्य, श्रम और सम्मान तीनों आवश्यक हैं।

जोहड़ : वर्षा की हर बूंद का संरक्षक

ग्रामीण राजस्थान में जोहड़ जल संरक्षण की सबसे प्रभावी प्रणालियों में शामिल रहे हैं। मिट्टी या पत्थर से निर्मित ये छोटे जलाशय वर्षा के पानी को रोकते थे और धीरे-धीरे उसे भूमि में समाहित होने देते थे। इससे भूजल स्तर बढ़ता था और आसपास के कुओं में पानी बना रहता था।

तालाब : जीवन की धड़कन

राजस्थान के लगभग प्रत्येक नगर और गांव में तालाबों का निर्माण किया गया। पेयजल, सिंचाई, पशुपालन और भूजल पुनर्भरण, इन सभी का आधार तालाब थे। कई नगरों का विकास ही तालाबों के आसपास हुआ।

नाड़ियां : मरुस्थल की जीवनरेखा

विशेष रूप से पश्चिमी राजस्थान में नाड़ियां वर्षाजल संग्रहण की स्थानीय व्यवस्था थीं। सीमित संसाधनों में अधिकतम लाभ प्राप्त करने की जो क्षमता राजस्थान के समाज ने विकसित की, नाड़ियां उसका उत्कृष्ट उदाहरण हैं।

जब जल संरक्षण जन आंदोलन था

- राजस्थान के शासकों ने जल को राज्य व्यवस्था का महत्वपूर्ण विषय माना। मेवाड़ के महाराणाओं ने झीलों का विशाल नेटवर्क विकसित किया। मारवाड़ के शासकों ने तालाबों और बावड़ियों का निर्माण कराया। जैसलमेर के भाटी शासकों ने मरुस्थल में जल संरक्षण की ऐसी प्रणालियां विकसित कीं जो आज भी अध्ययन का विषय हैं।
- लेकिन जल संरक्षण की सबसे बड़ी शक्ति समाज था। व्यापारी समुदाय, धर्मार्थ संस्थाएं और स्थानीय नागरिक इसमें सक्रिय भागीदार थे। जल स्रोतों की देखभाल के लिए सामाजिक नियम बनाए गए थे और उन्हें प्रदूषित करना सामाजिक अपराध माना जाता था।
- यह व्यवस्था हमें बताती है कि जल संकट का समाधान केवल सरकारों से नहीं आएगा। जब तक समाज स्वयं पानी के प्रति जिम्मेदारी महसूस नहीं करेगा, तब तक कोई भी तकनीक स्थायी समाधान नहीं बन सकती।

जल विरासत के जीवंत उदाहरण

गड़ीसर तालाब : मरुभूमि की जीवनरेखा... जैसलमेर का गड़ीसर तालाब राजस्थान की जल दूरदृष्टि का शानदार उदाहरण है। 14वीं शताब्दी में बना जलाशय कभी पूरे नगर की प्यास बुझाता था। मरुस्थल के बीच यह तालाब इस बात का प्रमाण है कि सीमित वर्षा वाले क्षेत्र में भी बुद्धिमत्ता और योजना के सहारे जल सुरक्षा प्राप्त की जा सकती है।

जोधपुर : दूरदृष्टि का जल विज्ञान... रानीसर, पद्मसर, बालसमंद, कायलाना और तूरजी का झालरा, जोधपुर की ये जल संरचनाएं दर्शाती हैं कि मरुस्थल में बसावट केवल साहस से नहीं, जल प्रबंधन से संभव हुई। इन जलाशयों ने सदियों तक शहर और आसपास के क्षेत्रों को जीवन दिया।

उदयपुर : झीलों का जीवंत नगर... उदयपुर को झीलों की नगरी यूं ही नहीं कहा जाता। पिछोला, फतेहसागर, उदयसागर और स्वरूपसागर जैसी झीलों ने मिलकर एक ऐसी जल प्रणाली विकसित की, जिसने शहर को जल सुरक्षा प्रदान की। यह नगर नियोजन और पर्यावरणीय समझ का अद्भुत उदाहरण है।

बूंदी : बावड़ियों का शहर... बूंदी की रानीजी की बावड़ी जल संरक्षण और स्थापत्य कला का अद्वितीय संगम है। इसकी बहुस्तरीय संरचना और कलात्मकता यह बताती है कि राजस्थान में जल संरचनाएं केवल उपयोगिता की वस्तु नहीं थीं, वे सौंदर्य और संस्कृति का भी हिस्सा थीं।

आभानेरी : विश्व को चकित करती चांद बावड़ी... दौसा जिले की चांद बावड़ी भारत ही नहीं, विश्व की सबसे विशाल और कलात्मक बावड़ियों में गिनी जाती है। हजारों सीढ़ियों से सुसज्जित यह संरचना उस युग की इंजीनियरिंग क्षमता और जल विज्ञान की अद्भुत मिसाल है।

रानियां और जल विरासत

राजस्थान की जल संस्कृति के इतिहास में महिलाओं का योगदान विशेष उल्लेख का अधिकारी है। अनेक बावड़ियां, कुएं और तालाब रानियों तथा राजमाताओं के संरक्षण में निर्मित हुए। बूंदी की रानीजी की बावड़ी और जोधपुर का रानीसर इसके प्रमुख उदाहरण हैं। इन संरचनाओं का उद्देश्य केवल जल उपलब्ध कराना नहीं था। वे जनकल्याण, सामाजिक सुरक्षा और भविष्य की पीढ़ियों के प्रति जिम्मेदारी का प्रतीक थीं।

अतीत की सीख, भविष्य का समाधान

- आज भारत जल संकट के ऐसे दौर में प्रवेश कर रहा है जहां पानी केवल विकास का विषय नहीं, अस्तित्व का प्रश्न बनता जा रहा है। भूजल स्तर लगातार गिर रहा है, जलवायु परिवर्तन वर्षा के पैटर्न को बदल रहा है और शहरों की बढ़ती आबादी जल संसाधनों पर दबाव बढ़ा रही है। ऐसे समय में राजस्थान की पारंपरिक जल प्रणालियां हमें एक महत्वपूर्ण संदेश देती हैं कि पानी को केवल खपत की वस्तु नहीं, संचयन की जिम्मेदारी समझना होगा।
- राजस्थान के अनेक क्षेत्रों में पुराने तालाबों, जोहड़ों और बावड़ियों के पुनर्जीवन से सकारात्मक परिणाम सामने आए हैं। जहां जल संरचनाएं पुनर्जीवित हुईं, वहां भूजल स्तर में सुधार हुआ, खेती को सहारा मिला और जल उपलब्धता बढ़ी। यह प्रमाण है कि परंपरा और आधुनिकता एक-दूसरे की विरोधी नहीं, बल्कि सहयोगी हो सकती हैं।

पर्यटन, संस्कृति और पर्यावरण

- आज राजस्थान की जल विरासत पर्यटन का महत्वपूर्ण आकर्षण बन चुकी है। देश-विदेश से आने वाले पर्यटक केवल किले और महल ही नहीं, बल्कि ऐतिहासिक बावड़ियों, झीलों और तालाबों को भी देखने आते हैं। लेकिन इन संरचनाओं का महत्व केवल पर्यटन तक सीमित नहीं है। वे हमें यह याद दिलाती हैं कि सतत विकास का विचार हमारे पूर्वज सदियों पहले समझ चुके थे।

पानी का सम्मान ही भविष्य की सुरक्षा

- राजस्थान की जल विरासत केवल अतीत की स्मृति नहीं, बल्कि भविष्य की आवश्यकता है। जिस प्रदेश ने मरुभूमि में जल संरक्षण का विज्ञान विकसित किया, वही आज जल संकट से जूझती दुनिया को टिकाऊ समाधान दे सकता है।
- बावड़ियां, जोहड़, तालाब और झीलें हमें यह संदेश देती हैं कि जल का सम्मान ही सभ्यता की स्थिरता का आधार है। राजस्थान ने पानी की कमी से लड़ना नहीं सीखा, बल्कि पानी के साथ जीना सीखा। यही उसकी सबसे बड़ी शक्ति है और यही उसकी सबसे मूल्यवान विरासत।
- पत्थरों में उकेरी गई ये जल संरचनाएं आज भी आने वाली पीढ़ियों से कहती हैं कि सभ्यताएं केवल नदियों के किनारे नहीं बनतीं, वे वहां भी फलती-फूलती हैं जहां समाज हर बूंद की कीमत समझता है।

'हर तालाब एक तिजोरी था, हर बावड़ी एक बैंक थी और हर जोहड़ भविष्य के लिए किया गया निवेश।'

'राजस्थान ने पानी की कमी से लड़ना नहीं सीखा, बल्कि पानी के साथ जीना सीखा।'

जालोर: भरपूर पानी, फिर भी पर्याप्त जलापूर्ति नहीं

आखिर किसकी लापरवाही से बह रहा करोड़ों लीटर पानी?

तरुण गहलोत,
✍ लेखक

पश्चिमी राजस्थान के लिए जीवनरेखा मानी जाने वाली नर्मदा परियोजना पर हजारों करोड़ रुपये खर्च किए गए, लेकिन विडंबना यह है कि आज भी जालोर जिला पानी के संकट से पूरी तरह मुक्त नहीं हो पाया है। जिले को प्रतिदिन करीब 14 करोड़ लीटर पेयजल की आवश्यकता है, जबकि महज 8.5 करोड़ लीटर पानी ही उपलब्ध कराया जा रहा है। इससे भी बड़ा सवाल यह है कि जो पानी दिया जा रहा है, उसका लगभग 41 प्रतिशत हिस्सा रास्ते में ही रिसाव व टूटी पाइपलाइनों के कारण बर्बाद हो जाता है। यानी सरकार पानी ला तो रही है, लेकिन उसे लोगों तक सुरक्षित पहुंचाने में पूरी तरह सफल अभी तक होना बाकी हैं।

लीकेज ने खोली जलदाय विभाग की पोल

जिले में जगह-जगह टूटी पाइपलाइनें, महीनों तक बहता पानी और मरम्मत में लापरवाही अब आम दृश्य बन चुके हैं। कई स्थानों पर पाइपलाइन से पानी सीधे नालों, खेतों और खाली जमीन में बह जाता है। यह केवल पानी की बर्बादी नहीं, बल्कि सरकारी धन और जनता के भरोसे की भी बर्बादी है। अगर 41 प्रतिशत पानी रास्ते में ही नष्ट हो रहा है तो यह केवल तकनीकी खामी नहीं, बल्कि जिम्मेदार अधिकारियों की गंभीर प्रशासनिक विफलता है।

नर्मदा आई, फिर भी ट्यूबवेलों का सहारा

नर्मदा परियोजना का उद्देश्य था कि जालोर जैसे सूखा प्रभावित जिले को स्थायी पेयजल उपलब्ध कराया जाए। लेकिन आज भी शहर की करीब 40 प्रतिशत जलापूर्ति स्थानीय ट्यूबवेलों से करनी पड़ रही है। ग्रामीण क्षेत्रों के अनेक गांव अभी भी भूजल पर निर्भर हैं। ऐसे में सवाल यही है कि हजारों करोड़ रुपये खर्च कर बनाई गई परियोजना का पूरा लाभ जनता तक क्यों नहीं पहुंच रहा?

हर गर्मी में वही संकट, वही दावे

गर्मी शुरू होते ही जलापूर्ति में कटौती, कम दबाव, टैंकरों पर निर्भरता और पेयजल संकट की खबरें आम हो जाती हैं। दूसरी ओर अधिकारी हर साल नए दावे और योजनाओं की घोषणाएं करते हैं, लेकिन जमीनी स्थिति में कोई बड़ा बदलाव दिखाई नहीं देता। यदि समय रहते रिसाव रोकने, पुरानी पाइपलाइन बदलने और वितरण व्यवस्था सुधारने पर ध्यान दिया जाता, तो आज लाखों लीटर पानी बचाया जा सकता था।

जवाबदेही तय करना जरूरी

पानी की कमी का रोना रोने से पहले यह जवाब देना होगा कि जो पानी उपलब्ध है, उसे बचाने के लिए क्या किया गया? आखिर करोड़ों लीटर पानी रोज बहने के बावजूद किसी अधिकारी की जवाबदेही क्यों तय नहीं होती? कितने अधिकारियों पर कार्रवाई हुई? कितने लीकेज स्थायी रूप से ठीक किए गए?

यदि इन सवालों के जवाब नहीं हैं, तो यह मानना पड़ेगा कि जल संकट प्राकृतिक कम और प्रशासनिक लापरवाही का परिणाम अधिक है।

अब ठोस कार्रवाई की जरूरत

जालोर की जनता को भाषण नहीं, पर्याप्त और नियमित पानी चाहिए। इसके लिए आवश्यक है कि-

» जिले में पुरानी व क्षतिग्रस्त पाइपलाइनें बदली जाएं।
» सभी लीकेज की समयबद्ध मरम्मत हो।
» पानी की बर्बादी के लिए जिम्मेदार अधिकारियों की जवाबदेही तय हो।
» नर्मदा परियोजना का लाभ हर गांव और शहर तक पहुंचे।
» जल वितरण प्रणाली की स्वतंत्र तकनीकी जांच हो।

पानी की एक-एक बूंद बचाने का संदेश जनता को दिया जाता है, लेकिन जब करोड़ों लीटर पानी सरकारी व्यवस्था की लापरवाही से सड़कों और खेतों में बह जाए, तो सबसे पहले जवाबदेही सरकार और संबंधित विभागों की बनती है। यदि अब भी व्यवस्था नहीं सुधरी, तो आने वाले वर्षों में जालोर का जल संकट और गहराएगा, और इसकी जिम्मेदारी केवल प्रकृति नहीं बल्कि प्रशासनिक उदासीनता होगी।

वर्षा जल को सहेजना ही असली चुनौती

राजस्थान में जल संकट, भूजल दोहन और भविष्य की जल सुरक्षा पर जल संचयन विशेषज्ञ एवं सीए अनिल जैन लंबे समय से काम कर रहे हैं। उनका मानना है कि राज्य की सबसे बड़ी चुनौती पानी की उपलब्धता नहीं, बल्कि उसके संरक्षण और पुनर्भरण की है। राजस्थान के जल भविष्य, भूजल संकट और संभावित समाधानों पर वरिष्ठ पत्रकार राकेश गांधी की सीए अनिल जैन के साथ बातचीत के प्रमुख अंश-

राजस्थान में अच्छी बारिश वाले वर्षों के बाद भी जल संकट बना रहता है। सबसे बड़ी चूक कहां हो रही है?

अनिल जैन : राजस्थान की समस्या केवल कम वर्षा नहीं है। असली समस्या यह है कि जो वर्षा होती है, उसका बड़ा हिस्सा हम सहेज नहीं पाते। बारिश का पानी बहकर निकल जाता है, जबकि उसे तालाबों, जोहड़ों, चेक डैमों और रिचार्ज संरचनाओं के माध्यम से जमीन में उतारा जाना चाहिए। यदि हर गांव और हर शहर अपने हिस्से का वर्षा जल संरक्षित करने लगे तो भूजल स्तर में बड़ा सुधार संभव है। मेरे विचार से जल संकट का सबसे बड़ा समाधान पानी को रोकने और जमीन में पहुंचाने की संस्कृति को फिर से स्थापित करना है।

सवाल : बड़े बांध और नहरें बनने के बावजूद भूजल संकट क्यों बढ़ता गया?

अनिल जैन : बड़े बांधों और नहरों ने राजस्थान के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इंदिरा गांधी नहर इसका सबसे बड़ा उदाहरण है। लेकिन हमारी अधिकांश योजनाओं का उद्देश्य पानी पहुंचाना था, पानी को वापस जमीन में पहुंचाना नहीं। आज पेयजल और सिंचाई व्यवस्था का बड़ा हिस्सा भूजल पर आधारित है, जबकि भूजल पुनर्भरण पर अपेक्षाकृत कम ध्यान दिया गया। भविष्य की जल नीति में आपूर्ति और पुनर्भरण दोनों को समान महत्व देना होगा।

राजस्थान के भूजल संकट का सबसे बड़ा कारण क्या है—प्रकृति या हमारी नीतियां?

अनिल जैन : कम वर्षा एक कारण है, लेकिन पूरी कहानी नहीं। असली समस्या यह है कि हम भूजल निकाल अधिक रहे हैं और भर कम रहे हैं। कई क्षेत्रों में पानी सैकड़ों फीट नीचे से निकाला जा रहा है। यदि निकासी लगातार बढ़े और पुनर्भरण सीमित रहे तो भूजल स्तर का गिरना स्वाभाविक है। इसलिए जल संकट को केवल प्राकृतिक समस्या मानना उचित नहीं होगा। इसमें हमारी विकास और जल उपयोग नीतियों की भी बड़ी भूमिका है।

राजस्थान में 2025 में सामान्य से काफी अधिक वर्षा हुई, फिर भी बड़ी संख्या में भूजल इकाइयां अति-दोहित बनी हुई हैं। इस विरोधाभास को आप कैसे देखते हैं?

अनिल जैन : यही राजस्थान की सबसे बड़ी जल चुनौती है। रिकॉर्ड वर्षा का मतलब यह नहीं कि भूजल स्वतः भर जाएगा। यदि बारिश कम समय में बहुत अधिक हो और उसका पानी तेजी से बहकर निकल जाए, तो उसका लाभ सीमित रह जाता है। हमें वर्षा की मात्रा से अधिक उसके संरक्षण और पुनर्भरण पर ध्यान देना होगा। भविष्य में जल सुरक्षा का पैमाना यही होगा कि बारिश का कितना पानी जमीन तक पहुंचा।

क्या राजस्थान को अपनी कृषि नीति और फसल पैटर्न पर पुनर्विचार करना होगा?

अनिल जैन : बिलकुल। राजस्थान के कुल जल उपयोग का सबसे बड़ा हिस्सा कृषि में जाता है। ऐसे क्षेत्रों में जहां भूजल तेजी से गिर रहा है, वहां कम पानी वाली और अधिक मूल्य वाली फसलों को बढ़ावा देना होगा। ड्रिप और स्प्रिंकलर जैसी तकनीकें जल उपयोग की दक्षता बढ़ा सकती हैं। आने वाले समय में खेती और जल प्रबंधन को अलग-अलग नहीं देखा जा सकेगा।

एक तरफ पानी की कमी है, दूसरी तरफ कई क्षेत्रों में फ्लोराइड और नाइट्रेट जैसी समस्याएं भी हैं। क्या भविष्य में जल गुणवत्ता बड़ी चुनौती बनेगी?

अनिल जैन : निश्चित रूप से। जल संकट केवल मात्रा का नहीं, गुणवत्ता का भी है। कई क्षेत्रों में पानी उपलब्ध है, लेकिन वह पीने योग्य नहीं है। फ्लोराइड, नाइट्रेट और लवणता जैसी समस्याएं स्वास्थ्य पर गंभीर प्रभाव डाल सकती हैं। भूजल स्तर गिरने के साथ यह चुनौती और बढ़ती है। इसलिए भविष्य की जल नीति में जल गुणवत्ता को भी उतनी ही प्राथमिकता देनी होगी जितनी जल उपलब्धता को दी जाती है।

क्या पारंपरिक जल संरचनाएं आज भी समाधान का हिस्सा बन सकती हैं?

अनिल जैन : राजस्थान का इतिहास बताता है कि पारंपरिक जल संरचनाएं केवल विरासत नहीं, बल्कि व्यवहारिक समाधान हैं। बावड़ियां, जोहड़, तालाब और टांके सदियों तक जल सुरक्षा का आधार रहे हैं। अलवर सहित कई क्षेत्रों में इनके पुनर्जीवन से सकारात्मक परिणाम मिले हैं। हालांकि केवल पारंपरिक प्रणालियां पर्याप्त नहीं होंगी। हमें परंपरा और आधुनिक तकनीक का संतुलित संयोजन अपनाना होगा।

आने वाले वर्षों में राजस्थान की सबसे बड़ी जलवायु चुनौती क्या होगी?

अनिल जैन : मुझे लगता है कि भविष्य में चुनौती केवल कम वर्षा नहीं होगी, बल्कि अनियमित वर्षा होगी। कुछ दिनों में अत्यधिक बारिश और लंबे शुष्क अंतराल नई परिस्थितियां पैदा करेंगे। ऐसे में जल संरक्षण की भूमिका और अधिक बढ़ जाएगी। हर बूंद का महत्व पहले से कहीं ज्यादा होगा।

कुछ विशेषज्ञ कहते हैं कि बड़े पैमाने पर नदी जल पुनर्भरण या नदी आधारित जल प्रबंधन परियोजनाएं तकनीकी और पर्यावरणीय दृष्टि से जटिल हैं। आप इस आलोचना को कैसे देखते हैं?

अनिल जैन : हर बड़ी परियोजना का वैज्ञानिक और पर्यावरणीय मूल्यांकन आवश्यक है। मेरा मानना है कि किसी भी समाधान को स्थानीय परिस्थितियों, पर्यावरणीय संतुलन और दीर्घकालिक प्रभावों को ध्यान में रखकर ही लागू किया जाना चाहिए। जल संकट का कोई एकमात्र समाधान नहीं है। वर्षा जल संरक्षण, भूजल पुनर्भरण, जल दक्षता, अपशिष्ट जल पुनर्चक्रण और वैज्ञानिक जल प्रबंधन—इन सभी को साथ लेकर चलना होगा।

यदि आपको राजस्थान सरकार और प्रदेशवासियों को केवल एक साझा सलाह देनी हो, तो वह क्या होगी?

अनिल जैन : मेरी सलाह बहुत सरल है—हर बूंद को रोकिए, सहेजिए और जमीन में उतारिए। जल संरक्षण को केवल सरकारी कार्यक्रम नहीं, बल्कि सामाजिक आंदोलन बनाना होगा। जब तक हम भूजल निकालने और उसे वापस भरने के बीच संतुलन स्थापित नहीं करेंगे, तब तक जल संकट बना रहेगा।

यदि आज का एक युवा वर्ष 2040 के राजस्थान की कल्पना करे, तो क्या उसे पानी को लेकर आश्वस्त होना चाहिए या चिंतित?

अनिल जैन : उसे न तो निराश होना चाहिए और न ही निश्चिंत। हमारे पास संसाधन हैं, तकनीक है और अनुभव भी है। सवाल केवल इच्छाशक्ति और प्राथमिकताओं का है। यदि हम अभी से जल संरक्षण, भूजल पुनर्भरण और जल दक्षता को प्राथमिकता दें तो 2040 का राजस्थान आज की तुलना में अधिक जल-सुरक्षित हो सकता है।

सबसे बड़ी गलती यह होगी कि हम भूजल को बैंक खाते की तरह केवल निकालते रहें और उसमें जमा करना भूल जाएं। 2040 का राजस्थान प्यासा होगा या जल-सुरक्षित, इसका फैसला बादल नहीं करेंगे। यह फैसला हम आज करेंगे।

> *"राजस्थान में पानी की कमी से ज्यादा पानी को सहेजने की कमी है।"*
>
> *"रिकॉर्ड बारिश भी जल सुरक्षा की गारंटी नहीं है, यदि पानी जमीन तक न पहुंचे।"*
>
> *"2040 का राजस्थान प्यासा होगा या जल-सुरक्षित, इसका फैसला हम आज करेंगे।"*

*इंपैक्ट फीचर

केयर फाउंडेशनः जहाँ सेवा ही सबसे बड़ा धर्म है

मानव सेवा का संकल्प...'जब इंसान दूसरों के दर्द को अपना दर्द समझने लगे, तभी सच्ची मानवता जन्म लेती है।' इसी भावना के साथ स्थापित केयर फाउंडेशन आज समाजसेवा का एक प्रेरणादायक नाम बन चुका है। कोविड-19 महामारी के दौरान चिकित्सा उपकरणों की कमी और मरीजों की बढ़ती जरूरतों को देखते हुए इसकी शुरुआत हुई। एक छोटे प्रयास के रूप में शुरू हुई यह संस्था आज हजारों जरूरतमंद परिवारों के लिए उम्मीद और राहत का केंद्र बन गई है।

निःशुल्क चिकित्सा उपकरणों की सुविधा

संस्था आर्थिक रूप से कमजोर मरीजों को व्हीलचेयर, हॉस्पिटल बेड, ऑक्सीजन कंसंट्रेटर, बाइपेप मशीन, वेंटिलेटर, कार्डियक मॉनिटर, सक्शन मशीन, इन्फ्यूजन पंप, डीवीटी मशीन, एयर बेड, वॉकर, टॉयलेट कमोड चेयर और आईवी स्टैंड सहित अनेक आधुनिक चिकित्सा उपकरण पूरी तरह निःशुल्क उपलब्ध कराती है। इन सेवाओं से हजारों मरीजों को बेहतर उपचार और उनके परिवारों को आर्थिक राहत मिली है।

निःशुल्क एंबुलेंस सेवा... केयर फाउंडेशन के सरपरस्त नासिर अली के सहयोग से तीन आधुनिक एंबुलेंस सेवाएं संचालित की जा रही हैं, जिनमें अत्याधुनिक आईसीयू एंबुलेंस भी शामिल है। ये सेवाएं गंभीर मरीजों को समय पर अस्पताल पहुंचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। इसके अलावा संस्था द्वारा शुरू की गई 'आखिरी सफर एंबुलेंस' दिवंगत व्यक्तियों के पार्थिव शरीर को सम्मानपूर्वक उनके घर तक पहुँचाने की संवेदनशील पहल है।

स्वास्थ्य शिविर और विशेषज्ञ सेवाएं... केयर फाउंडेशन के सहयोग से संचालित दार अल शिफा हॉस्पिटल में प्रसिद्ध चिकित्सक एवं डायरेक्टर डॉ. समीर अली प्रत्येक माह लीवर रोगियों के लिए निःशुल्क फाइब्रोस्कैन जांच करवाते हैं। इसके साथ ही समय-समय पर विभिन्न स्वास्थ्य जांच शिविर आयोजित किए जाते हैं, जहां हजारों लोगों को निःशुल्क जांच, चिकित्सकीय परामर्श, उपचार और दवाइयों का लाभ मिलता है।

महिलाओं की सक्रिय भागीदारी... संस्था की सक्रिय सदस्य तेजकंवर सांखला चिकित्सा उपकरण वितरण, रक्तदान शिविरों के आयोजन और अन्य सामाजिक गतिविधियों में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। उनका समर्पण इस बात का प्रमाण है कि समाजसेवा तभी सफल होती है, जब हर वर्ग और हर व्यक्ति उसमें सहभागी बने।

भविष्य की योजनाएं और आह्वान... सभी धर्मों और समाजों के सहयोग से केयर फाउंडेशन ने भविष्य के स्थायी सेवा प्रकल्पों के लिए भूमि प्राप्त की है, जहाँ मानव सेवा से जुड़े नए कार्य शुरू किए जाएंगे। संस्था का उद्देश्य केवल चिकित्सा सहायता तक सीमित नहीं, बल्कि हर जरूरतमंद तक सम्मानपूर्वक सहायता पहुंचाना है।

केयर फाउंडेशन सभी नागरिकों से इस सेवा अभियान में सहभागी बनने, अपने सुझाव देने और मानवता की इस मुहिम को आगे बढ़ाने का आह्वान करता है। क्योंकि निस्वार्थ सेवा ही सच्ची मानवता और सबसे बड़ी इबादत है।

बारूद का गणित और लाइसेंस का चमत्कार

बलवंत राज मेहता,
वरिष्ठ व्यंग्यकार

जयपुर में अवैध पटाखा गोदामों पर छापे पड़ रहे हैं और बारूद का ऐसा गणित सामने आ रहा है कि गणितज्ञ भी माथा पकड़ लें। लाइसेंस 600 किलो का, लेकिन गोदाम में 1000 किलो से ज्यादा माल! लगता है बारूद ने भी महंगाई के दौर में आत्मनिर्भर होकर खुद को बढ़ाना सीख लिया है। मजेदार बात यह है कि जिन जगहों पर सुरक्षा नियमों की सबसे ज्यादा जरूरत है, वहीं नियम सबसे कम दिखाई देते हैं। स्कूल, कॉलेज, छात्रावास और आबादी के पास गोदाम ऐसे खड़े हैं जैसे बच्चों की पढ़ाई के साथ-साथ आतिशबाजी का प्रायोगिक प्रशिक्षण भी चल रहा हो। कागजों में सब कुछ व्यवस्थित रहता है लाइसेंस, क्षमता और नियम। बस जमीन पर पहुंचते ही बारूद का वजन, गोदाम की सीमा और जिम्मेदारी, तीनों का रूपांतरण हो जाता है। हादसा होने तक सब सामान्य रहता है, और हादसे के बाद अचानक सबको सुरक्षा याद आ जाती है। लगता है हमारे यहां बारूद से ज्यादा विस्फोटक चीज अगर कोई है, तो वह है लापरवाही जो हर जांच में नए रिकॉर्ड बना रही है।

वंदे भारत का खिलौना संस्करण

झुंझुनू रेलवे स्टेशन पर खिलौना वंदे भारत दौड़ी तो लगा कि शेखावाटी ने आखिरकार अपनी रेल नीति खुद बना ली है। जब असली ट्रेन न मिले, तो खिलौने से ही काम चलाओ। देश के कई शहर वंदे भारत की रफ्तार नाप रहे हैं, जबकि शेखावाटी अभी भी आश्वासनों के प्लेटफॉर्म पर खड़ी अगली घोषणा का इंतजार कर रही है। फर्क सिर्फ इतना है कि वहां ट्रेनें चलती हैं, यहां मांगपत्र। रेल मंत्रालय के आंकड़ों में शेखावाटी शायद नक्शे पर मौजूद है, लेकिन रेल सुविधाओं की प्राथमिकता सूची में उसकी बोगी अभी तक जोड़ी नहीं गई। इसलिए लोगों ने खिलौना ट्रेन चलाकर याद दिलाया कि यह इलाका केवल चुनावी भाषणों का स्टेशन नहीं, लाखों यात्रियों की जरूरतों का भी जंक्शन है। विडंबना देखिए, जिन पटरियों पर लोग वंदे भारत की उम्मीद कर रहे हैं, वहां फिलहाल प्रतीक्षा ही सबसे नियमित सेवा है। अब सवाल यह है कि पहले असली ट्रेन आएगी या अगले प्रदर्शन में खिलौना ट्रेन का नया मॉडल?

बुलडोजर का भूगोल

जैसलमेर में सौ करोड़ की सरकारी जमीन आखिरकार सरकार को वापस मिल गई। यह खबर सुनकर जमीन भी शायद राहत की सांस ले रही होगी कि चलो, वर्षों बाद असली मालिक को मेरी याद तो आई। हमारे यहां जमीन का भी बड़ा दिलचस्प चरित्र है। जब तक वह बंजर रहती है, कोई उसे पूछता नहीं। जैसे ही सड़क, बाईपास या विकास की हवा लगती है, अचानक कई लोगों को सपना आने लगता है कि यह जमीन तो उनके पुरखों ने ही छोड़ी थी। फिर रातों-रात चारदीवारी उगती है, टीनशेड खिलते हैं और कब्जे की फसल लहलहाने लगती है। प्रशासन भी कम दिलचस्प नहीं। वह वर्षों तक दूरबीन से देखता रहता है और एक दिन अचानक बुलडोजर के साथ प्रकट होकर बताता है कि जमीन सरकारी है। इस पूरी कहानी का सबसे बड़ा सबक यही है कि सरकारी जमीन पर कब्जा करने वाले अक्सर उसे अपनी समझ लेते हैं, लेकिन राजस्व रिकॉर्ड की स्मृति उनसे कहीं अधिक लंबी होती है। बुलडोजर देर से आता है, मगर जब आता है तो भूगोल का पाठ नए सिरे से पढ़ा जाता है।

कागज़ के बैसाखीधारी

सरकारी नौकरी की दौड़ में जहां हजारों वास्तविक दिव्यांग अभ्यर्थी वर्षों तक दर-दर भटकते हैं, वहीं कुछ लोग केवल कागजी बैसाखियों के सहारे मंज़िल तक पहुंच जाते हैं। कमाल यह कि उनकी चाल भी दुरुस्त रहती है और नौकरी भी सुरक्षित। झालावाड़ का मामला बताता है कि हमारे यहां दिव्यांगता शरीर में कम और फाइलों में ज़्यादा पाई जाती है। मेडिकल बोर्ड ने जब परतें खोलीं तो एक शिक्षक की दिव्यांगता छह प्रतिशत निकली और दूसरे की शून्य। लेकिन सरकारी रिकॉर्ड में दोनों इतने दिव्यांग थे कि आरक्षण का लाभ लेकर वर्षों से वेतन भी लेते रहे। हैरानी इस बात की नहीं कि फर्जी प्रमाण-पत्र बने, हैरानी यह है कि बारह साल तक व्यवस्था की आंखों पर भी शायद वही कागजी पट्टी बंधी रही। नौकरी मिल गई, वेतन मिलता रहा, पदोन्नति की उम्मीदें भी पलती रहीं और किसी को भनक तक नहीं लगी। अब गिरफ्तारी हुई है तो सवाल केवल दो शिक्षकों पर नहीं, उन दरवाजों पर भी है जहां से फर्जीवाड़ा मुस्कुराते हुए भीतर घुसा। वरना शून्य प्रतिशत दिव्यांगता का चालीस प्रतिशत आरक्षण में बदल जाना किसी चमत्कार से कम नहीं, और चमत्कार आमतौर पर सरकारी फाइलों में नहीं होते।

ताले में बंद करोड़ों का विकास

बाड़मेर में विकास का नया मॉडल सामने आया है। पहले करोड़ों रुपये खर्च कर निर्माण करो, फिर उसे ताले में बंद कर दो। पीजी कॉलेज के पास बना सुलभ कॉम्प्लेक्स लम्बे समय से बंद पड़ा है, मानो आमजन की सुविधा नहीं बल्कि कोई खजाना हो। महिलाओं के लिए लाखों रुपये से बना पिंक टॉयलेट भी महीनों से उद्घाटन की प्रतीक्षा में धूल फांक रहा है। सबसे दिलचस्प हाल 16 करोड़ रुपये के टाउन हॉल का है। भवन तैयार, कुर्सियां तैयार, सुविधाएं तैयार, लेकिन उद्घाटन का मुहूर्त शायद अभी तक नहीं निकला। ऐसा लगता है कि यहां निर्माण कार्य पूरा होना पर्याप्त नहीं, किसी वीआईपी के फीता काटने की कृपा भी जरूरी है। जनता पूछ रही है कि सुविधाएं उपयोग के लिए बनती हैं या ताले सजाने के लिए? यदि करोड़ों रुपये खर्च होने के बाद भी आम आदमी को लाभ नहीं मिले, तो विकास कागजों में जरूर दिखाई देगा, जमीन पर नहीं। बाड़मेर में फिलहाल ताले ही सबसे बड़े लाभार्थी नजर आते हैं।

साख लौटाने की जिम्मेदारी

राजस्थान टुडे

युवाओं के भविष्य से जुड़ी राजस्थान की दो अहम संस्थाएं राजस्थान लोक सेवा आयोग (आरपीएससी) और राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (माशिबो) एक बार फिर नेतृत्व परिवर्तन के दौर से गुजर रही हैं। अजमेर स्थित इन ऐतिहासिक संस्थानों का इतिहास केवल प्रशासनिक फेरबदल का इतिहास नहीं है, बल्कि यह प्रदेश के लाखों युवाओं की आकांक्षाओं, उनके संघर्षों और व्यवस्था पर टिके उनके भरोसे का जीवंत दस्तावेज भी है। हालिया घटनाक्रम में आरपीएससी के अध्यक्ष उत्कल रंजन साहू की विदाई के बाद लेफ्टिनेंट कर्नल केसरीसिंह राठौड़ को कार्यवाहक अध्यक्ष की जिम्मेदारी सौंपना और बोर्ड में लंबे अंतराल के बाद हनुमानसिंह राठौड़ की नियुक्ति संस्थागत विश्वसनीयता को पुनर्स्थापित करने का प्रयास माना जा सकता है।

कलंक की वह परछाई

कभी प्रतिष्ठित और भरोसेमंद संस्थाओं में शुमार आरपीएससी के विरुद्ध पिछले कुछ वर्षों में जिस तरह पेपर लीक, भर्ती घोटालों और भ्रष्टाचार के संगीन आरोप सामने आए, उन्होंने इसके गौरवमयी इतिहास पर गहरे दाग लगाए। जब पूर्व डीजीपी उत्कल रंजन साहू ने आयोग की कमान संभाली, तब यह संस्था अपने सबसे स्याह दौर से गुजर रही थी। एक पूर्व सदस्य बाबूलाल कटारा जेल की सलाखों के पीछे थे, पेपर लीक के जिन्न ने लाखों युवाओं के भविष्य को अधर में लटका दिया था और जनता की नजरों में यह संस्थान 'लूट का अड्डा' बन चुका था।

यह पूरे सिस्टम की साख पर एक बड़ा प्रश्नचिह्न था। इस दौर ने आरपीएससी को एक चयन संस्था से अधिक संदेह के घेरे में खड़ी संस्था बना दिया। लगातार हुए खुलासों ने मेहनती अभ्यर्थियों के मन में यह गंभीर सवाल खड़ा कर दिया कि क्या उनकी ईमानदारी से की गई पढ़ाई का कोई मूल्य बचा भी है या नहीं।

साहू के सुधार : एक अधूरी यात्रा

ऐसे चुनौतीपूर्ण माहौल में उत्कल रंजन साहू का कार्यकाल अपेक्षाकृत सुधारवादी और राहत देने वाला माना जा सकता है। उन्होंने लड़खड़ाते सिस्टम को संभालने के लिए कुछ महत्वपूर्ण और कड़े कदम उठाए। कम्प्यूटर बेस्ड रिक्रूटमेंट टेस्ट (सीबीआरटी) की बहाली कर पारदर्शिता बढ़ाने की कोशिश की गई, वहीं मूल्यांकन प्रक्रिया को अधिक स्पष्ट और भरोसेमंद बनाने के लिए पारदर्शी अंक प्रणाली लागू की गई। परीक्षा आयोजन में लापरवाही को समाप्त करने के लिए प्रशासनिक मुस्तैदी और निगरानी बढ़ाई गई। इसका परिणाम यह रहा कि उनके कार्यकाल में करीब 14 हजार युवाओं को नौकरियां मिलीं और 34 हजार से अधिक कर्मचारियों को पदोन्नति मिली। वह भी बिना किसी बड़े विवाद या पेपर लीक की घटना के।

साहू का कार्यकाल भले ही बेदाग रहा हो, लेकिन इससे पहले हुए घोटालों ने युवाओं के मानस-पटल पर जो गहरे घाव छोड़े हैं, वे आज भी हरे हैं। आज भी अभ्यर्थी परीक्षा केंद्र पर जाते समय पूरी तरह आश्वस्त नहीं हो पाता। एक परीक्षा का बेदाग होना अस्थायी राहत तो दे सकता है, लेकिन व्यवस्था पर स्थायी भरोसा कायम होना अधिक जरूरी है। सच यह है कि आज भी युवाओं के मन से वह संशय पूरी तरह समाप्त नहीं हुआ है, क्योंकि आरपीएससी का भर्ती कैलेंडर अभी भी अपने निर्धारित समय से काफी पीछे चल रहा है। भविष्य संवारने की उम्मीद लगाए युवा समय पर परीक्षाएं और परिणाम नहीं आने से भीतर ही भीतर टूट रहे हैं।

हार्दिक शुभकामनाएं

ईश्वर की अनुकम्पा व आशीर्वाद से हमारे प्रिय

अभिषेक परिहार

सुपुत्र श्रीमती निर्मला-श्री सम्पतसिंहजी परिहार (Retd. Sr. PET)
सुपौत्र श्रद्धेय श्रीमती पपीयादेवी-श्रद्धेय श्री मूलसिंहजी परिहार
के अधिशाषी अभियन्ता (विद्युत) JDA JODHPUR से
अधीक्षण अभियन्ता (SE) विभागीय पदोन्नति होने पर
हार्दिक बधाई एवं उज्जवल भविष्य की शुभकामनाएं।

शुभकामनाएं

श्रीमती सरिता परिहार (धर्मपत्नी), तन्मय, तन्वी (पुत्र, पुत्री), कमला-श्रद्धेय श्यामसिंहजी (बड़े माता-पिता), कीर्ति (मनु)-गजेन्द्रजी चौहान (DGM) सैण्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया (बहन-बहनोई), सोनू (BOB)-मनीष, कीर्ति (BOB)-आशीष (I.A.), भावना-ठे. सन्दीप AA, सुशीला-ठे. सुनील इंजि. (भ्रातावधु-भ्राता), लव, यवनिका, सान्वी, क्रिश्वी, श्रीयान्, ग्रीषा, ऋषभ, समृद्धि, उत्कर्ष, यशोदा-श्रद्धेय ठे. घनश्यामसिंहजी गहलोत (सास-ससुर) एवं समस्त परिहार परिवार ।

आपकी इस उपलब्धि पर हमें गर्व है। आपकी लगन, समर्पण और उत्कृष्ट कार्यशैली से परिवार गौरवान्वित है।
आपके उज्जवल भविष्य और निरंतर प्रगति की कामना करते हैं।

निवास : परिहारों का बास, मगरा पूंजला, मण्डोर, जोधपुर। मो. : 9660704442

वर्दी का अनुशासन और सिविल प्रशासन की जटिलता

नए कार्यवाहक अध्यक्ष के रूप में कर्नल केसरीसिंह राठौड़ की नियुक्ति इस व्यवस्था में एक दिलचस्प मोड़ लेकर आई है। सैन्य पृष्ठभूमि से आने वाले अधिकारी से स्वाभाविक रूप से कड़े अनुशासन, सख्ती और व्यवस्थित कार्यशैली की अपेक्षा की जाती है। सेना में 22 वर्षों का लंबा अनुभव रखने वाले कर्नल राठौड़ को यह भी ध्यान रखना होगा कि सैन्य अनुशासन और सिविल प्रशासन की अपनी अलग जटिलताएं होती हैं। यहां सख्ती के साथ संवेदनशीलता और युवाओं के साथ निरंतर संवाद भी उतना ही आवश्यक है।

सदस्य रहते हुए रिकॉर्ड संख्या में साक्षात्कार बोर्डों के संचालन का उनका अनुभव उनकी प्रशासनिक क्षमता को प्रमाणित करता है, लेकिन कार्यवाहक अध्यक्ष के रूप में उनकी प्राथमिकताएं कहीं अधिक व्यापक और स्पष्ट हैं। उनके सामने समयबद्ध भर्ती प्रक्रिया, तकनीक आधारित सुरक्षित परीक्षा प्रणाली और आंतरिक भ्रष्टाचार के प्रति शून्य सहनशीलता की नीति लागू करने की चुनौती है। कार्यवाहक अध्यक्ष के रूप में उन्हें केवल दैनिक कामकाज नहीं संभालना है, बल्कि आने वाली आरएएस जैसी बड़ी और संवेदनशील परीक्षाओं को पूरी तरह सुरक्षित और विवादमुक्त बनाकर अपनी योग्यता भी साबित करनी होगी।

प्रशासक राज का अंत, नई शुरुआत

- दूसरी ओर, राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड पिछले साढ़े चार वर्षों से नेतृत्वहीनता का दंश झेल रहा था। जनवरी 2022 में रीट पेपर लीक मामले में तत्कालीन अध्यक्ष डी.पी. जारोली की बर्खास्तगी के बाद से यह पद रिक्त था। बोर्ड केवल प्रशासनिक समन्वयकों और प्रशासक के रूप में कार्यरत संभागीय आयुक्त के भरोसे चल रहा था। एक संभागीय आयुक्त के पास पहले से ही कानून-व्यवस्था और प्रशासन से जुड़े अनेक दायित्व होते हैं, जिससे वे बोर्ड को पर्याप्त समय नहीं दे पा रहे थे।

- शिक्षाविदों का मानना है कि इस लंबे दौर में बोर्ड के नीतिगत निर्णयों में भारी देरी हुई, परीक्षा प्रणाली में सुधार की गति बेहद धीमी रही और एक स्थायी दृष्टि (विजन) का अभाव स्पष्ट रूप से महसूस किया गया।
- अब अजमेर के निवासी और शिक्षा जगत के अनुभवी प्रशासक हनुमानसिंह राठौड़ को तीन वर्षों के लिए यह जिम्मेदारी सौंपी गई है। मजबूत सांगठनिक पृष्ठभूमि और शिक्षा क्षेत्र का लंबा जमीनी अनुभव रखने वाले हनुमानसिंह को अध्यक्ष बनाकर सरकार ने यह स्पष्ट संकेत दिया है कि वह बोर्ड को फिर से सक्रिय, स्वायत्त और प्रभावी बनाना चाहती है।

परीक्षा से आगे की सोच... माध्यमिक शिक्षा बोर्ड की भूमिका केवल वार्षिक परीक्षाएँ आयोजित करने या अंकतालिकाएँ वितरित करने तक सीमित नहीं है। यह संस्था राज्य की स्कूली शिक्षा की गुणवत्ता, पाठ्यक्रम और मूल्यांकन पद्धति निर्धारित करने वाली सबसे महत्वपूर्ण धुरी है। विशेषज्ञों के अनुसार, आने वाले समय में नए अध्यक्ष को केवल गोपनीयता बनाए रखने के पारंपरिक ढर्रे से आगे बढ़कर कई नए मोर्चों पर काम करना होगा।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के प्रभावी क्रियान्वयन, परीक्षा प्रणाली के आधुनिकीकरण, कौशल आधारित शिक्षा को बढ़ावा देने तथा विद्यार्थियों पर बढ़ते परीक्षा दबाव को कम करने जैसी महत्वपूर्ण चुनौतियां उनके सामने होंगी।

श्रद्धेय

चोलजी गहलोत

(चोलजी हलवाई)

को भावभीनी श्रद्धांजलि

'स्वाद अमर है, संस्कार अमर है'

कुछ व्यक्तित्व केवल अपने व्यवसाय से नहीं, बल्कि अपने व्यवहार, संस्कार और सेवा से लोगों के हृदय में अमर हो जाते हैं। ऐसे ही व्यक्तित्व थे स्वर्गीय चोलजी गहलोत (चोलजी हलवाई)। उन्होंने अपने हाथों के स्वाद से हजारों लोगों का मन जीता, अपनी सादगी से समाज का सम्मान पाया और अपने संघर्ष से यह सिद्ध कर दिया कि परिस्थितियां चाहे कितनी भी कठिन क्यों न हों, यदि मन में दृढ़ संकल्प, ईमानदारी और अथक परिश्रम हो तो सफलता स्वयं कदम चूमती है।

आज भले ही चोलजी हमारे बीच शारीरिक रूप से नहीं हैं, लेकिन उनकी बनाई गोल्डन कलर की देसी घी और गुड़ की लापसी, उनकी प्रसिद्ध कढ़ी, उनके हाथों के स्वादिष्ट पकवान और सबसे बढ़कर उनकी विनम्र मुस्कान आज भी हर व्यक्ति की स्मृतियों में जीवित है। उनका जीवन केवल एक हलवाई की सफलता की कहानी नहीं, बल्कि संघर्ष, सेवा, संस्कार और समर्पण की प्रेरक गाथा है।

संघर्षों की मिट्टी में खिला सफलता का कमल

- सन् 1958 में जैतारण की साधारण धरती पर किसान परिवार में जन्मे चोलजी गहलोत बचपन से ही कठिन परिस्थितियों में पले-बढ़े। पिता श्री गोपाराम जी गहलोत (माली) और माता श्रीमती केली देवी ने उन्हें ईमानदारी, मेहनत और संस्कारों की शिक्षा दी। आर्थिक अभावों ने उनके जीवन की राह आसान नहीं रहने दी। कुछ वर्षों तक आटा चक्की पर नौकरी की। फिर पढ़ाई के साथ-साथ उन्हें बाजार की किराने की दुकान पर काम करना पड़ा। लेकिन जीवन ने उन्हें जल्दी ही यह सिखा दिया कि संघर्ष से भागने वाले नहीं, बल्कि संघर्ष को गले लगाने वाले ही इतिहास रचते हैं।
- घर की आर्थिक जिम्मेदारियों के कारण वे अपनी शिक्षा पूरी नहीं कर सके। उन्होंने पिता के साथ खेतों में काम किया। तपती धूप, पसीने से भीगी मेहनत और परिवार की जिम्मेदारियों ने उनके व्यक्तित्व को मजबूत बनाया। लेकिन उनके भीतर एक सपना लगातार जीवित था—कुछ ऐसा करना जिससे केवल परिवार ही नहीं, पूरा समाज उन्हें याद रखे।

स्वर्गीय चोलजी गहलोत केवल एक प्रसिद्ध हलवाई नहीं थे, बल्कि संघर्ष की मिसाल, सेवा की प्रतिमूर्ति, सादगी के प्रतीक और मानवता के सच्चे साधक थे। उनकी स्मृतियां, उनका जीवन और उनके आदर्श सदैव समाज को प्रेरणा देते रहेंगे। उनके जीवन का संदेश स्पष्ट है—'सफल वही नहीं जो ऊंचाई तक पहुंचे, बल्कि वह है जो ऊंचाई पर पहुंचकर भी इंसानियत को साथ लेकर चले।' यही चोलजी की अमर पहचान है।

स्वाद से कहीं बड़ा था उनका व्यक्तित्व

चोलजी की पहचान केवल स्वादिष्ट भोजन तक सीमित नहीं थी। वे अत्यंत सरल, सहज और विनम्र स्वभाव के व्यक्ति थे।

वे हर व्यक्ति से मुस्कुराकर मिलते थे। उनके लिए अमीर-गरीब, छोटा-बड़ा, जाति-पंथ का कोई भेद नहीं था। उनके व्यवहार में अपनापन झलकता था। वे मानते थे कि भोजन केवल पेट भरने का साधन नहीं, बल्कि प्रेम और सम्मान का माध्यम है। यही कारण था कि उनके बनाए व्यंजन लोगों के मन तक पहुँचते थे।

समाज सेवा थी जीवन का सबसे बड़ा धर्म

व्यवसाय में सफलता मिलने के बाद भी चोलजी का जीवन कभी अहंकार से नहीं भरा। उन्होंने समाज सेवा को अपनी सबसे बड़ी जिम्मेदारी माना। वे निर्धनों की सहायता करते, पक्षियों के लिए दाना-पानी की व्यवस्था करते और जरूरतमंदों की सेवा में सदैव तत्पर रहते थे। धार्मिक कार्यों में उनकी विशेष रुचि थी। वे रेन धाम के अनंत श्री दरियाव जी महाराज के परम श्रद्धालु थे। उन्होंने यह सिखाया कि कमाई तभी सार्थक होती है जब उसका एक हिस्सा समाज के कल्याण में लगे।

मेहनत की कमाई, ईमानदारी की पहचान

आज के समय में सफलता पाने के लिए लोग कई बार शॉर्टकट तलाशते हैं। लेकिन चोलजी ने अपने पूरे जीवन से यह संदेश दिया कि ईमानदारी का कोई विकल्प नहीं होता। उन्होंने कभी गुणवत्ता से समझौता नहीं किया। शुद्ध देसी घी, उत्तम सामग्री और पूरी लगन से तैयार किए गए व्यंजन उनकी पहचान बने।

लोग कहते थे कि चोलजी केवल मिठाई नहीं बनाते, बल्कि अपने हाथों से प्रेम परोसते हैं। यही कारण था कि उनका नाम जैतारण ही नहीं, निमाज, गिरी, कालू, लांबिया, रास, रायपुर, बर, मेड़ता तथा आसपास के सैकड़ों गांवों के साथ-साथ प्रवासी समाज और दक्षिण भारत तक सम्मान से लिया जाने लगा।

विरासत जो पीढ़ियों तक जीवित रहेगी

आज जैतारण में बस स्टैंड के निकट स्थित 'चोलजी स्वीट्स एंड नमकीन' केवल एक दुकान नहीं, बल्कि संघर्ष, परिश्रम और विश्वास का प्रतीक है।

उनके बड़े पुत्र दिनेश गहलोत ने पिता के साथ रहकर यह कला सीखी और आज उसी समर्पण से इस परंपरा को आगे बढ़ा रहे हैं। बड़े पुत्र दिनेश गहलोत का व्यवहार, लगन और मेहनत इस काम को आगे बढ़ा रहा है। वे भी चोलजी की तरह ही हर खाने में स्वाद देने में माहिर है। छोटे पुत्र जबरचंद गहलोत हर कार्य में उनका हाथ बटाते हैं। दोनों भाइयों में असीम प्रेम है। पौत्र और पूरा परिवार इस अमूल्य विरासत को संभाल रहे हैं।

यह केवल व्यवसाय की विरासत नहीं, बल्कि ईमानदारी, गुणवत्ता और संस्कारों की विरासत है।

असफलताओं को बनाया सफलता की सीढ़ी

▪ चोलजी ने कभी एक ही रास्ते पर रुकना नहीं सीखा। उन्होंने अनाज की दुकान खोली, फिर उसे छोटे भाइयों को सौंप दिया। इसके बाद ट्रक लेकर पंजाब और मध्य प्रदेश से चारा लाकर क्षेत्र में बेचने का व्यवसाय शुरू किया। कई बार सेना की अनुमति लेकर अकाल के समय पंजाब बॉर्डर क्रॉस करके ट्रक लेकर पाकिस्तान से भी चारा लाते थे। वर्षों तक यह काम चलता रहा, लेकिन उनके मन को वह संतोष नहीं मिला जिसकी उन्हें तलाश थी।

▪ जीवन बार-बार परीक्षा ले रहा था। वर्ष 1992 में पिता का निधन उनके जीवन का सबसे बड़ा आघात बनकर आया। किसी भी पुत्र के लिए यह क्षण अत्यंत कठिन होता है। लेकिन चोलजी ने दुख को अपनी कमजोरी नहीं बनने दिया। उन्होंने अपने आंसू छिपाकर फिर से जीवन की नई शुरुआत करने का निर्णय लिया। यही वह क्षण था जिसने एक सामान्य व्यक्ति को असाधारण बना दिया।

जब बनी सुवर्ण जैसी लापसी, बदल गई जिंदगी

▪ वर्ष 1993 में चोलजी ने हलवाई का काम प्रारंभ किया। शुरुआत में किसी को अंदाजा नहीं था कि उनके हाथों का स्वाद एक दिन पूरे क्षेत्र की पहचान बन जाएगा।

▪ उन्होंने सबसे पहले गुड़ और देसी घी से बनी गोल्डन कलर की लापसी तैयार की। यह केवल एक व्यंजन नहीं था, बल्कि प्रेम, शुद्धता और मेहनत का अद्भुत संगम था। जिसने भी इसे एक बार चखा, वह जीवनभर उसका स्वाद नहीं भूल पाया।

▪ धीरे-धीरे उनकी कढ़ी और अन्य व्यंजन भी प्रसिद्ध होने लगे। विवाह समारोह हों, धार्मिक आयोजन हों या सामाजिक कार्यक्रम—हर जगह लोग एक ही नाम लेने लगे—'चोलजी हलवाई'।

▪ **कहा जाने लगा कि यदि किसी आयोजन में चोलजी के हाथ का भोजन बन रहा है, तो सफलता निश्चित है। यही विश्वास किसी भी व्यक्ति की सबसे बड़ी पूँजी होता है।**

स्मृतियों में अमर हो गए चोलजी

25 फरवरी 2026 को जब चोलजी इस संसार से विदा हुए, तब केवल एक व्यक्ति नहीं गया, बल्कि एक युग समाप्त हुआ। उनके निधन का समाचार सुनकर पूरे क्षेत्र में शोक की लहर दौड़ गई। हजारों लोग उन्हें अंतिम श्रद्धांजलि देने उमड़ पड़े। हर किसी की आंखें नम थीं और हर जुबान पर एक ही बात थी—'ऐसा इंसान बार-बार नहीं जन्म लेता।' वे अपने पीछे दो भाई, दो पुत्र, दो पुत्रियाँ, तीन पौत्र, पत्नी तथा असंख्य शिष्य और शुभचिंतक छोड़ गए। लेकिन उससे भी बड़ी बात यह है कि वे अपने पीछे ऐसे जीवन-मूल्य छोड़ गए जो आने वाली पीढ़ियों को सदैव प्रेरित करते रहेंगे।

चोलजी का जीवन हमें सिखाता है

चोलजी ने अपने बच्चों और शिष्यों को हमेशा यही शिक्षा दी कि 'ईमानदारी, मेहनत, लगन, सरलता और सादगी से हर मंजिल प्राप्त की जा सकती है।' यही उनके जीवन का सबसे बड़ा संदेश है। स्वर्गीय चोलजी गहलोत केवल एक प्रसिद्ध हलवाई नहीं थे, बल्कि संघर्ष की मिसाल, सेवा की प्रतिमूर्ति, सादगी के प्रतीक और मानवता के सच्चे साधक थे। उनकी स्मृतियां, उनका जीवन और उनके आदर्श सदैव समाज को प्रेरणा देते रहेंगे। उनके जीवन का संदेश स्पष्ट है—'सफल वही नहीं जो ऊंचाई तक पहुंचे, बल्कि वह है जो ऊंचाई पर पहुंचकर भी इंसानियत को साथ लेकर चले।' यही चोलजी की अमर पहचान है।

पार्टीगण कृपया ध्यान दें, आपके माननीय कुछ ही क्षणों में बदलने वाले हैं..

टूटते सांसदों की नई फसल!

हरीश मलिक,
वरिष्ठ व्यंग्यकार

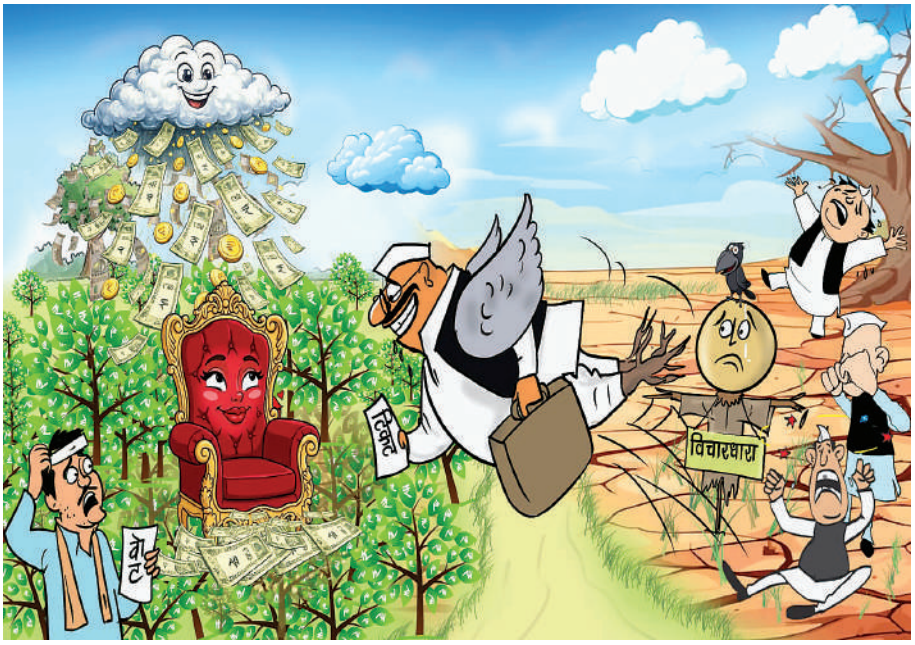

हमारा लोकतंत्र बड़ा उर्वर है। इसकी बड़ी विशेषता है कि यहां हर चीज बदल सकती है- सरकार, विचार, नारे, घोषणाएं और कभी-कभी नेताओं की अंतरआत्मा भी। केवल एक चीज स्थिर है- कुर्सी। हर दल-बदल की यात्रा अंततः कुर्सी की दिशा में जाती है। इस यात्रा में हर मौसम में कुछ न कुछ उगता रहता है। कभी विचारधाराएं उगती थीं, आंदोलन उगते थे, नेता उगते थे। अब एक नई फसल उगी है- टूटते हुए सांसदों की फसल। इसकी खासियत यह है कि इसे किसी खाद, पानी या वैचारिक सिंचाई की जरूरत नहीं पड़ती। केवल सत्ता की धूप, सिक्कों की खाद और संभावनाओं की हवा मिल जाए तो यह अपने-आप दूसरी जमीन पर लहलहाने लगती है।

दिलचस्प यह भी है कि जिस सियासत में पहले चुनाव जीतने की दौड़ में शामिल होते थे, वहां अब पार्टी छोड़ने की दौड़ में शामिल हो रहे हैं। सांसदों की हालत ऐसी हो गई है जैसे किसी स्टेशन पर आखिरी ट्रेन खड़ी हो और सबको डर हो कि कहीं सीट न छूट जाए। पुराने जमाने में दल बदलने से पहले नेता अपने विचार बदलते थे। अब विचारों को ज्यादा परेशान नहीं किया जाता, उन्हें वहीं छोड़ दिया जाता है और केवल सांसद महोदय अपना पता बदल लेते हैं। लोकतंत्र भी बड़ा सहनशील है। वह हर पांच साल में जनता से पूछता है, 'आपने जिन्हें भेजा था, वे अभी वहीं हैं या किसी और पार्टी के घर चाय पी रहे हैं?'

पार्टी छोड़ने की इस राष्ट्रीय प्रतियोगिता का खास नहीं आम सांसदों ने उद्घाटन किया। आम आदमी पार्टी के सांसद भाजपा में चले गए। यह राजनीति का वह अध्याय है, जिसमें विचारधारा को सम्मानपूर्वक कुर्सी के नीचे रख दिया जाता है और नेता नई पार्टी में प्रवेश करते समय कहते हैं- 'मेरे विचार तो वही हैं, बस उनका पता बदल गया है।' आम आदमी पार्टी का हाल कुछ वैसा है जैसे कोई व्यक्ति मोहल्ले में स्वच्छता अभियान चलाए और एक दिन पता चले कि उसके अपने घर के लोग ही सामान समेटकर पड़ोस में रहने चले गए हैं।

जिन लोगों ने राजनीति में नई संस्कृति, नई भाषा और नए आदर्शों का बोर्ड लगाया था, आज उन्हें अपने ही सांसदों के जाने के बाद पुराने राजनीतिक मुहावरे खोजने पड़ रहे हैं। वैसे 'आप' को आत्मनिरीक्षण तो करना चाहिए। जिसने राजनीति में ईमानदारी और नई संस्कृति का झाड़ू लगाने का दावा किया था, आज उसके अपने सांसद ही घर की धूल बनकर क्यों उड़ रहे हैं?

टीएमसी सांसदों ने तो दल-बदल की दुनिया में शोध का नया अध्याय लिख दिया। लोग जब घर छोड़ते हैं तो कम से कम ऐसे घर में जाते हैं, जिसका पता पड़ोसी जानते हों। लेकिन टीएमसी के सांसद अनाम-सी नेशनलिस्ट सिटीजन्स पार्टी ऑफ इंडिया में चले गए। ऐसा लगा जैसे कोई आदमी अपना पुराना महल छोड़कर ऐसी झोपड़ी में रहने चला जाए, जिसका पता खुद झोपड़ी को भी मालूम न हो। हालत यह हो गई कि देश की जनता तो छोड़िए, शायद गूगल बाबा को भी चश्मा साफ करके देखना पड़ा कि आखिर यह नई राजनीतिक प्रजाति कहां से प्रकट हो गई। टीएमसी को जरूर सोचना चाहिए कि बंगाल में कभी जिसकी आवाज तूफान जैसी गूंजती थी, उसके सांसद अब फुसफुसाहट की तरह गायब क्यों हो रहे हैं?

इस बीच शिवसेना (उद्धव) की कहानी तो किसी पुराने मकान जैसी हो गई, जिसमें पहले दीवारें टूटीं, फिर दरवाजे उखड़े और अब खिड़कियां भी दूसरी इमारत में फिट होने के लिए निकल रही हैं। सुनते हैं कि 'ऑपरेशन टाइगर' चला है। बाघ जंगल छोड़ रहा है और जंगल के मालिक को समझ नहीं आ रहा कि दहाड़े या रोए। संजय राउत का दर्द भी बड़ा मानवीय है। कल तक जिन नेताओं के साथ फोटो खिंचवाते हुए मुस्कान कान तक पहुंच जाती थी, आज उन्हीं के लिए शब्द ऐसे निकल रहे हैं, जैसे शब्दकोश ने बदला लेने की कसम खा ली हो। जब तक सांसद अपने रहे, वे शेर हैं; दूसरे के हुए तो गद्दार का तमगा मिल गया।

उत्तर प्रदेश की सियासत भी इस टूट महोत्सव से अछूती नहीं रहना चाहती। एसबीएसपी के प्रमुख ओमप्रकाश राजभर ने समाजवादी पार्टी के 25 सांसदों के टूटने का दावा करके राजनीतिक बाजार में नया शेयर छोड़ दिया। उपमुख्यमंत्री केशव प्रसाद मौर्य ने तो बड़ी मासूमियत से कह दिया कि हम तो किसी को तोड़ नहीं रहे, सांसद खुद ही टूटने को तैयार बैठे हैं। यह बयान सुनकर बुजुर्गों को पुराने दिनों की बैलगाड़ी याद आ गई होगी, जो खुद चलकर दूसरे गांव चली जाती थी और मालिक बाद में कहता था कि हमने तो भेजा ही नहीं था, बैल की अपनी ही इच्छा थी। क्षेत्रीय दलों की सियासत में हालात ऐसे हो गए हैं कि आने वाले समय में संसद के बाहर एक नया बोर्ड लगाना पड़ेगा- "राजनीतिक दलों से अनुरोध है कि कृपया अपना सामान संभालकर रखें। सांसदों की पार्टी कभी भी बदल सकती है।"

दल-बदल का खेल, बेमेल

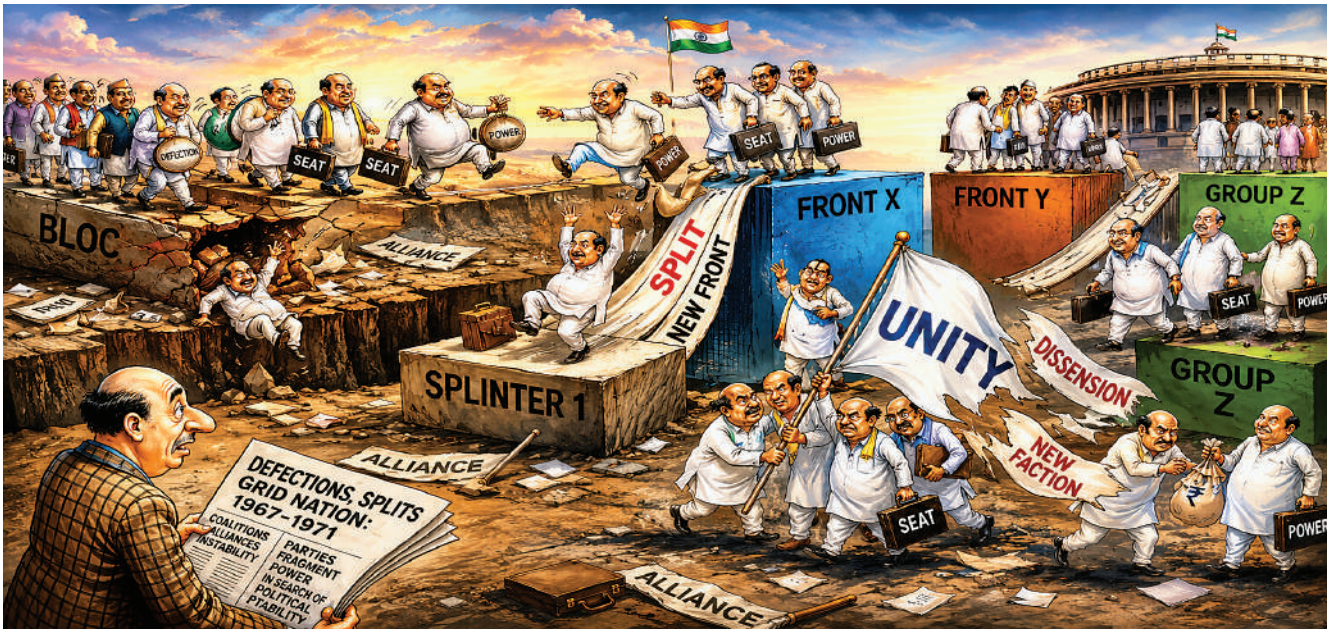

राजनीतिक दलों में टूट-फूट, सांसदों-विधायकों के बदलते पाले और गठबंधन की कमजोर पड़ती एकजुटता के बीच सत्ता और विपक्ष दोनों नए समीकरण साधने में जुटे हैं।

राधा रमण, ✍ वरिष्ठ पत्रकार

जाने-माने शायर जावेद हसन उर्फ वसीम बरेलवी का एक शेर है -

"उसी को जीने का हक है इस जमाने में,
जो इधर का लगता रहे और उधर का हो जाए।"

आजकल देश की राजनीति में कुछ ऐसा ही हो रहा है। देश में इससे पहले दल-बदल का इतना बड़ा खेल शायद ही कभी हुआ हो, जितना आज देखने को मिल रहा है। खुला खेल फर्रुखाबादी है। पहले आम आदमी पार्टी, फिर तृणमूल कांग्रेस और शिवसेना (उद्धव बालासाहेब ठाकरे) के बाद अब उत्तरप्रदेश में समाजवादी पार्टी और बिहार में राष्ट्रीय जनता दल में भी टूट-फूट की सुगबुगाहट सुनाई देने लगी है। ऐसा लगता है कि देश में सिद्धांतों की राजनीति की बजाय सुविधा की राजनीति हावी हो गई है। पता नहीं हमारे नेताओं की अंतरात्मा हमेशा सत्ता के साथ ही क्यों खड़ी दिखाई देती है।

दरअसल, सारा खेल परिसीमन विधेयक को लेकर बताया जा रहा है। याद कीजिए, दो माह पहले सरकार लोकसभा में नारी शक्ति वंदन अधिनियम की आड़ में संसदीय क्षेत्रों के नए सिरे से गठन के लिए संविधान संशोधन विधेयक लेकर आई थी। तब विधेयक के समर्थन में 298 और विरोध में 230 वोट पड़े थे। सरकार का वह प्रयास सफल नहीं हो पाया था। इससे सरकार की काफी फजीहत भी हुई थी। हालांकि मीडिया प्रबंधन में माहिर सरकार ने पूरे मुद्दे को नारी शक्ति वंदन अधिनियम का रूप देकर विपक्ष को कठघरे में खड़ा कर दिया था। एनडीए नेताओं का कहना था कि विपक्ष की मंशा महिला विरोधी है। बाद के विधानसभा चुनावों, खासकर पश्चिम बंगाल और असम में, एनडीए को इसका राजनीतिक लाभ भी मिला। विपक्ष एनडीए के इस नैरेटिव का प्रभावी जवाब नहीं दे सका।

यहां यह उल्लेख करना जरूरी है कि सितंबर 2023 में संसद के विशेष अधिवेशन के दौरान नारी शक्ति वंदन अधिनियम पारित हो चुका था और तब सत्ता पक्ष तथा विपक्ष- दोनों ने इसका समर्थन किया था। लेकिन अब चर्चा इस बात की है कि सरकार इसकी आड़ में परिसीमन से जुड़ा विधेयक पारित कराना चाहती है।

> कुछ दिन पहले तक लोकसभा में एनडीए की सदस्य संख्या 292 थी, जो तृणमूल कांग्रेस और शिवसेना (उबाठा) में विभाजन के बाद बढ़कर 318 बताई जा रही है। सरकार की कोशिश इसे दो-तिहाई बहुमत यानी 362 से अधिक तक ले जाने की है। यही कारण है कि विपक्षी सांसद अंतरात्मा की आवाज सुनकर तेजी से एनडीए के पाले में आते दिखाई दे रहे हैं। सरकार की यही कोशिश राज्यसभा में भी दो-तिहाई बहुमत जुटाने की है, क्योंकि कोई भी संविधान संशोधन दोनों सदनों में विशेष बहुमत के बिना पारित नहीं हो सकता।

244 सदस्यीय राज्यसभा में एनडीए के सदस्यों की संख्या 152 बताई जा रही है, जो दो-तिहाई बहुमत से 11 कम है। इसी बीच मिजोरम से नवनिर्वाचित राज्यसभा सदस्य लालतलुआंगकिमा ने कहा है कि वे संसद में तटस्थ सदस्य के रूप में रहेंगे, लेकिन कुछ शर्तों के साथ सत्तापक्ष को समर्थन जारी रखेंगे। ज्ञात हो कि वे मिजोरम की सत्तारूढ़ जोराम पीपुल्स मूवमेंट (जेपीएम) के एकमात्र राज्यसभा सदस्य हैं। उधर, अटकलें यह भी हैं कि आने वाले दिनों में कुछ और राज्यसभा सदस्य इस्तीफा दे सकते हैं। यह सही है कि सत्ता के लिए बहुमत जरूरी होता है, लेकिन लोकतंत्र केवल अंकगणित का खेल नहीं है। यहां आंकड़ों की बाजीगरी के साथ-साथ लोकलाज और लोकहित भी उतने ही महत्वपूर्ण हैं। वरिष्ठ पत्रकार के.पी. सिंह कहते हैं कि भारतीय लोकतंत्र की सबसे बड़ी विशेषता यह रही है कि उसने केवल संविधान की लिखित धाराओं के सहारे नहीं, बल्कि संवैधानिक परंपराओं, राजनीतिक मर्यादाओं और संस्थागत आत्मसंयम के आधार पर भी अपनी यात्रा तय की है। उनके अनुसार, संविधान निर्माताओं ने स्वयं स्वीकार किया था कि किसी भी संविधान में शासन और राजनीति के हर संभावित विवाद का समाधान शब्दशः नहीं लिखा जा सकता। इसलिए संविधान के अक्षर के साथ-साथ उसकी मंशा, उसकी आत्मा और उसके मूल उद्देश्यों को भी समझना आवश्यक है। सवाल यह है कि क्या वर्तमान परिप्रेक्ष्य में ऐसा होता दिखाई देता है? इतिहास इसका मूल्यांकन अवश्य करेगा।

तिनका-तिनका बिखर रहा ममता का सपना

पश्चिम बंगाल विधानसभा चुनाव में बुरी तरह पराजित ममता बनर्जी के सामने अब पार्टी का अस्तित्व बचाने की चुनौती खड़ी हो गई है। उनके 80 में से 62 विधायक स्वयं को असली तृणमूल कांग्रेस का प्रतिनिधि बताते हुए सदन में अलग बैठने लगे हैं। इतना ही नहीं, बागी विधायकों में से एक ऋतब्रत बनर्जी को विधानसभा अध्यक्ष ने नेता प्रतिपक्ष घोषित कर दिया है। इस पर कलकत्ता हाईकोर्ट ने भी अपनी मुहर लगा दी है।

इस बीच, बागी गुट ने स्वयं को असली तृणमूल कांग्रेस घोषित करते हुए विधायक अरूप रॉय को पार्टी का नया अध्यक्ष बना दिया है। बागियों ने ममता बनर्जी को पार्टी में सलाहकार पद की पेशकश भी की है।

उधर, तृणमूल कांग्रेस के 28 में से 20 लोकसभा सांसदों ने अलग गुट बनाकर त्रिपुरा की एक गैर-मान्यता प्राप्त क्षेत्रीय पार्टी नेशनलिस्ट सिटिजंस पार्टी ऑफ इंडिया (एनसीपीआई) में विलय का दावा किया है। बागी खेमे की नेता काकोली घोष दस्तीदार का कहना है कि वे अब देश के विकास में सहभागी बनना चाहते हैं और केंद्र की लोकप्रिय एनडीए सरकार का समर्थन करेंगे।

दूसरी ओर, राज्यसभा के चार सांसद- सुष्मिता देव, सुखेंदु शेखर रे, प्रकाश बारिक और कोयल मलिक ने अपने पदों से इस्तीफा दे दिया है। अब यदि राज्यसभा की इन सीटों पर उपचुनाव होता है तो स्वाभाविक रूप से भाजपा के लिए अपने उम्मीदवारों को विजयी बनाना अपेक्षाकृत आसान हो जाएगा।

कभी जिस तृणमूल कांग्रेस को ममता बनर्जी की राजनीतिक ताकत और जनाधार का पर्याय माना जाता था, आज वही पार्टी अपने सबसे बड़े अस्तित्वगत संकट से गुजरती दिखाई दे रही है। ममता बनर्जी ने तीन दशक के लंबे राजनीतिक संघर्ष से जिस संगठन को खड़ा किया था, उसके भीतर पैदा हुई यह बगावत केवल नेतृत्व का संकट नहीं, बल्कि संगठनात्मक असंतोष की भी कहानी कहती है।

राजनीति में हार-जीत लगी रहती है, लेकिन चुनावी पराजय के बाद जिस तेजी से पार्टी के भीतर दरारें उभरती दिखाई दे रही हैं, उसने ममता बनर्जी की नेतृत्व क्षमता और संगठन पर उनकी पकड़—दोनों पर सवाल खड़े कर दिए हैं।

राजनीतिक पर्यवेक्षकों का मानना है कि यदि यह सिलसिला आगे भी जारी रहा तो पश्चिम बंगाल की राजनीति में आने वाले दिनों में बड़े बदलाव देखने को मिल सकते हैं। फिलहाल इतना तय है कि ममता बनर्जी के लिए यह दौर राजनीतिक संघर्ष से कहीं अधिक राजनीतिक अस्तित्व की लड़ाई का बनता जा रहा है।

कभी विपक्षी एकता की धुरी मानी जाने वाली ममता बनर्जी आज अपने ही घर को संभालने में व्यस्त दिखाई दे रही हैं। यही राजनीति का सबसे बड़ा सच भी है— जो कल तक दूसरों की राजनीति तय कर रहा था, आज उसे अपनी राजनीति बचाने की चिंता सता रही है।

इंडी गठबंधन
अपनी ढपली, अपना राग

एक तरफ एनडीए अपना कुनबा बढ़ाने में जुटा है, तो दूसरी तरफ इंडी गठबंधन में सिर-फुटौव्वल जारी है। गठबंधन के घटक दल ही एक-दूसरे के उम्मीदवारों को हराने में जी-जान से जुटे दिखाई दे रहे हैं। पिछले कुछ वर्षों के चुनावी अनुभव बताते हैं कि विपक्षी एकता का दावा जितना मजबूत मंचों और प्रेस कॉन्फ्रेंसों में दिखाई देता है, जमीनी राजनीति में वह उतना ही कमजोर नजर आता है।

देश ने देखा है कि मध्यप्रदेश, राजस्थान, छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र, हरियाणा, दिल्ली, बिहार, असम, केरल और पश्चिम बंगाल के चुनावों में इंडी गठबंधन के दल किस तरह आपसी खींचतान में उलझे रहे। नतीजा यह हुआ कि कई स्थानों पर एनडीए को अपेक्षाकृत आसान जीत मिलती चली गई। विपक्षी दलों के बीच समन्वय की कमी और नेतृत्व को लेकर असमंजस लगातार सामने आता रहा।

तमिलनाडु में तो स्थिति और भी दिलचस्प बताई जा रही है। कांग्रेस, कम्युनिस्ट दलों और इंडियन यूनियन मुस्लिम लीग के नेताओं के टीवीके के साथ जाने की चर्चाओं ने डीएमके नेतृत्व की चिंता बढ़ा दी है। कहा जा रहा है कि इस घटनाक्रम से मुख्यमंत्री एम.के. स्टालिन खासे असहज हैं। राजनीतिक गलियारों में तो यहां तक चर्चा है कि यदि परिस्थितियां अनुकूल रहीं, तो डीएमके अपने राजनीतिक विकल्पों पर पुनर्विचार कर सकती है। हालांकि राजनीति में चर्चाएं और वास्तविकता हमेशा एक जैसी नहीं होतीं, फिर भी धुआं वहीं उठता है जहां कहीं न कहीं आग सुलग रही हो।

बिहार और झारखंड के हालिया राज्यसभा चुनावों ने भी इंडी गठबंधन की अंतर्विरोधों से भरी राजनीति को उजागर किया है। आरोप लगे कि कुछ विधायकों ने दलगत प्रतिबद्धता से अधिक व्यक्तिगत हितों को प्राथमिकता दी, जिसका नुकसान गठबंधन को उठाना पड़ा। राजनीति में संख्या बल जितना महत्वपूर्ण होता है, उतना ही महत्वपूर्ण भरोसा भी होता है। और फिलहाल यही भरोसा विपक्षी खेमे में सबसे दुर्लभ वस्तु दिखाई दे रहा है।

मध्यप्रदेश में भी कई महत्वपूर्ण मौकों पर विपक्षी एकजुटता केवल बयानबाजी तक सीमित दिखाई दी। नेताओं के बीच तालमेल का अभाव और साझा रणनीति की कमी बार-बार सामने आती रही।

अगले वर्ष उत्तरप्रदेश और पंजाब में विधानसभा चुनाव होने हैं। ऐसे में विपक्षी राजनीति की असली परीक्षा अब शुरू होने वाली है। पंजाब में कांग्रेस और आम आदमी पार्टी के बीच बढ़ती दूरी किसी से छिपी नहीं है। दिल्ली विधानसभा चुनाव में मिली करारी हार के बाद आम आदमी पार्टी ने अलग राह पकड़ ली है। दूसरी ओर, कांग्रेस अभी से पंजाब में अपना राजनीतिक आधार मजबूत करने में जुट गई है। दोनों दलों के बीच सहयोग की संभावनाएं लगातार कमजोर पड़ती दिखाई दे रही हैं।

उत्तरप्रदेश में भी स्थिति कम दिलचस्प नहीं है। यहां टिकटों के बंटवारे को लेकर अभी से चर्चाओं का बाजार गर्म है। कांग्रेस और समाजवादी पार्टी दोनों ही अपने-अपने प्रभाव क्षेत्र को बढ़ा-चढ़ाकर पेश कर रही हैं। दोनों दलों के समर्थकों के बीच भी सीटों को लेकर खींचतान शुरू हो चुकी है।

उधर, समाजवादी पार्टी के भीतर संभावित असंतोष को लेकर भी अटकलों का दौर जारी है। राज्यसभा सांसद रामगोपाल यादव के नेतृत्व में संसदीय दल में टूट की आशंका व्यक्त की जा रही है। उत्तरप्रदेश सरकार के मंत्री ओमप्रकाश राजभर और उपमुख्यमंत्री केशव प्रसाद मौर्य खुलकर ऐसी संभावना जता चुके हैं। हालांकि समाजवादी पार्टी के नेता इन दावों को सिरे से खारिज कर रहे हैं, लेकिन रामगोपाल यादव की चुप्पी को लेकर राजनीतिक हलकों में तरह-तरह की चर्चाएं हैं।

चर्चा यह भी है कि समाजवादी पार्टी आगामी राज्यसभा चुनाव में रामगोपाल यादव को दोबारा मौका नहीं दे सकती। मुलायम सिंह यादव के चचेरे भाई रामगोपाल यादव पार्टी के सबसे अनुभवी नेताओं में गिने जाते हैं। ऐसे में यदि उन्हें लेकर कोई असहमति पैदा होती है, तो उसके राजनीतिक निहितार्थ दूरगामी हो सकते हैं।

कुल मिलाकर तस्वीर साफ है। एक ओर एनडीए अपने विस्तार और संख्याबल को मजबूत करने की रणनीति पर काम कर रहा है, तो दूसरी ओर इंडी गठबंधन अपने अंतर्विरोधों से जूझता दिखाई दे रहा है। राजनीति में केवल सत्ता विरोध पर्याप्त नहीं होता; उसके लिए साझा दृष्टि, साझा नेतृत्व और साझा संघर्ष की भी आवश्यकता होती है।

फिलहाल विपक्ष की सबसे बड़ी चुनौती सत्ता पक्ष नहीं, बल्कि उसकी अपनी आंतरिक कमजोरियां हैं। जब सहयोगी दल ही एक-दूसरे पर भरोसा न कर पा रहे हों, तब जनता को एक वैकल्पिक राजनीतिक व्यवस्था का भरोसा दिलाना आसान नहीं होता। यही कारण है कि विपक्षी एकता का दावा जितना बड़ा दिखाई देता है, उसकी जमीन उतनी ही कमजोर नजर आती है।

आने वाले महीनों में यह स्पष्ट हो जाएगा कि इंडी गठबंधन अपने अंतर्विरोधों पर काबू पाकर एक प्रभावी राजनीतिक विकल्प बन पाता है या फिर "अपनी ढपली, अपना राग" की स्थिति ही उसकी सबसे बड़ी पहचान बनकर रह जाती है।

राजस्थान कांग्रेस का अंतहीन थ्रिलर

राजस्थान कांग्रेस में अशोक गहलोत और सचिन पायलट के बीच वर्षों पुराना सत्ता संघर्ष फिलहाल थमता दिख रहा है। कांग्रेस नेतृत्व दोनों नेताओं के बीच संतुलन साधते हुए संगठनात्मक एकता बनाए रखना चाहता है, जबकि भविष्य की राजनीति गहलोत की विरासत और पायलट की महत्वाकांक्षाओं के बीच संतुलन पर निर्भर करेगी।

सुरेश व्यास,
वरिष्ठ पत्रकार

साल 2022 के एपिसोड के बाद से अशोक गहलोत राजस्थान तक ही सीमित हैं। पिछले करीब तीन दशकों में शायद यह पहला मौका है, जब चुनाव हारने या सत्ता गंवाने के बाद गहलोत किसी केंद्रीय भूमिका में नहीं हैं। इतना ही नहीं, लंबे समय बाद वे अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी (एआईसीसी) के सदस्य भी नहीं हैं। वे राजस्थान में पूर्व मुख्यमंत्री और कांग्रेस के वरिष्ठ नेता के रूप में सक्रिय राजनीति कर रहे हैं। इससे पहले 2003 हो या 2013, कांग्रेस की हार के बावजूद गहलोत कभी संगठन महामंत्री तो कभी एआईसीसी सदस्य के रूप में कांग्रेस आलाकमान के नजदीक बने रहे।

इसके उलट, 2023 की हार के बाद सचिन पायलट कांग्रेस आलाकमान की आंखों के तारे बने हुए हैं। वे अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के महासचिव और छत्तीसगढ़ के प्रभारी हैं, लेकिन उनका मन अब भी राजस्थान की राजनीति में ही रमा हुआ है।

कुल मिलाकर, 2020 में शुरू हुई गहलोत बनाम पायलट की लड़ाई अब भी जारी है। यह विवाद आज भी कांग्रेस के लिए किसी डरावने सपने से कम नहीं है।

गहलोत गाहे-बगाहे मानेसर प्रकरण को याद कर भाजपा का नाम लेते हुए पायलट पर निशाना साधते रहे हैं। जैसे-जैसे गांधी परिवार से पायलट की नजदीकी बढ़ने और उन्हें मेहनत का फल मिलने की चर्चाएं तेज होती हैं, गहलोत मानेसर का मुद्दा सामने ले आते हैं।

इस बार तो उन्होंने 14 अप्रैल से ही मानेसर के बहाने पायलट को घेरने का कोई अवसर नहीं छोड़ा। यहां तक कि हाल ही में भाजपा के नवनियुक्त प्रदेश प्रभारी राधामोहन अग्रवाल ने टोंक में पायलट को 'भगौड़ा' कहा तो गहलोत ने उनका बचाव करते हुए भी मानेसर प्रकरण का उल्लेख करना नहीं भूले। इसके बाद उन्होंने नीट पेपर लीक मामले में केंद्रीय शिक्षा मंत्री धर्मेंद्र प्रधान को सूत्रधार बताते हुए भी मानेसर का जिक्र कर दिया।

फिर मई के आखिरी दिनों में गहलोत ने बड़ा हमला बोला। उन्होंने कहा कि वे कांग्रेस के राष्ट्रीय अध्यक्ष बनना चाहते थे, लेकिन उनके खिलाफ साजिश रची गई। इसमें भी उनका निशाना पायलट ही थे। चार वर्ष पुरानी घटना का उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि लोग उन्हें आलाकमान की अवहेलना का 'क्रिएटर' मानते हैं, जबकि उनके समर्थकों की बगावत कांग्रेस आलाकमान के खिलाफ नहीं, बल्कि पायलट के खिलाफ थी। यह बात पायलट को समझ में नहीं आ रही और बेवजह उन्हें खलनायक साबित किया जा रहा है।

गहलोत का यह दांव राजनीतिक हलकों में 'शह और मात' का खेल माना गया। अच्छे-अच्छे राजनीतिक पर्यवेक्षक भी सकते में आ गए और लगा कि अब गहलोत पायलट को आगे बढ़ाने वाली कांग्रेस आलाकमान की नीति के खिलाफ खुलकर सामने आ जाएंगे। लेकिन इसी दौरान पायलट से एक राजनीतिक भूल हो गई। उन्होंने करौली में अपने पिता राजेश पायलट की प्रतिमा के अनावरण समारोह में दिए गए भाषण में गहलोत और अपने पिता के बीच रही अदावत का परोक्ष उल्लेख कर दिया। उन्होंने गहलोत पर परोक्ष निशाना साधा, लेकिन यहां राजेश पायलट का उल्लेख राजनीतिक रूप से सचिन पायलट के लिए उलटा पड़ गया। कारण यह कि जिस आलाकमान की अवहेलना के लिए वे गहलोत को घेरते हैं, उनके पिता भी सीताराम केसरी के खिलाफ चुनाव लड़कर कांग्रेस आलाकमान की अवहेलना कर चुके थे।

गहलोत के बाद पायलट का बयान भी आलाकमान को नागवार गुजरा। दिल्ली से संभवतः गहलोत और पायलट दोनों को चेतावनी दी गई। इसके अगले दिन पायलट ने दौसा में कहा कि हम सब कांग्रेस पार्टी के सैनिक हैं और गहलोत उन्हें पुत्रवत स्नेह करते हैं। यानी उन्होंने ताजा विवाद को समाप्त करने के संकेत दे दिए। गहलोत ने भी पायलट की तारीफ कर दी। गहलोत के पक्ष में एक बात यह रही कि तीखा बयान देने के बाद उन्होंने विवाद को आगे नहीं बढ़ाया। इसका अर्थ यह निकाला गया कि उनका उद्देश्य अपना पक्ष दर्ज कराना था, कोई स्थायी युद्ध छेड़ना नहीं।

दूसरी ओर, पायलट ने भी एक परिपक्व राष्ट्रीय नेता के रूप में संयमित प्रतिक्रिया देकर खुद को धैर्यवान नेता के तौर पर प्रस्तुत करने की कोशिश की। इसका असर हाल ही में लोकसभा में नेता प्रतिपक्ष राहुल गांधी की कोटा यात्रा के दौरान दिखाई दिया। इतनी तल्खी और उसके बाद सुलह के संकेतों के बीच गहलोत और पायलट, विधानसभा में नेता प्रतिपक्ष टीकाराम जूली, कांग्रेस प्रदेशाध्यक्ष गोविंद सिंह डोटासरा और अन्य नेताओं के साथ खिलखिलाकर हंसते हुए नजर आए। उनकी यह तस्वीर काफी चर्चा में रही।

कई राजनीतिक पर्यवेक्षकों का मानना है कि गहलोत केवल एक नेता नहीं, बल्कि राजस्थान कांग्रेस के अनेक सामाजिक वर्गों—विशेषकर ओबीसी, अल्पसंख्यक और पारंपरिक कांग्रेस समर्थक तबकों के लिए भरोसेमंद चेहरा हैं।

कांग्रेस के पास फिलहाल ऐसा दूसरा नेता नहीं है, जो इन सभी वर्गों को एक साथ साध सके। दूसरी ओर, पायलट निःसंदेह युवाओं में लोकप्रिय हैं। वे एक बड़े जनाधार वाले नेता के रूप में उभर रहे हैं, लेकिन उनकी राजनीतिक जड़ें अभी राजस्थान की राजनीति में गहलोत जितनी मजबूत नहीं हैं।

फिर भी कांग्रेस में नई पीढ़ी को आगे लाने की जो रणनीति चल रही है, उसके हिसाब से पायलट के अवसर बनते हैं। लेकिन पार्टी फिलहाल संतुलन की राजनीति पर चलना चाहती है। राजस्थान विधानसभा चुनाव में अभी करीब ढाई वर्ष का समय बाकी है। कांग्रेस अभी से किसी एक चेहरे को घोषित करने का जोखिम उठाने की स्थिति में नहीं है।

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि राजस्थान कांग्रेस की राजनीति का अगला अध्याय 'गहलोत बनाम पायलट' नहीं, बल्कि गहलोत की विरासत और पायलट के भविष्य के बीच संतुलन तय करेगा।

दरअसल, राजस्थान ऐसा राज्य है, जहां अन्य राज्यों की तुलना में भाजपा को अपेक्षाकृत कड़ी चुनौती मिल रही है। कांग्रेस की अगुवाई वाला विपक्ष सड़क से लेकर सदन तक सक्रिय और आक्रामक नजर आता है। ऐसे में भाजपा की रणनीति भी यही रहती है कि गहलोत बनाम पायलट के विवाद को जीवित रखा जाए। यही कारण है कि कभी भाजपा के प्रदेशाध्यक्ष पायलट को भाजपा में आने का न्योता देते हैं तो कभी राजेंद्र राठौड़ जैसे नेता कहते हैं कि गहलोत कभी पायलट को आगे नहीं आने देंगे।

उधर कांग्रेस भी समझ चुकी है कि गहलोत-पायलट की लड़ाई का सीधा लाभ भाजपा को हो सकता है। इसलिए पार्टी का राष्ट्रीय नेतृत्व पिछले कुछ समय से एकता का संदेश देने की कोशिश कर रहा है। राजस्थान उन राज्यों में शामिल है, जहां कांग्रेस भाजपा को मजबूत चुनौती दे सकती है। ऐसी स्थिति में यदि गहलोत और पायलट फिर से खुली लड़ाई में उतरते हैं तो दिल्ली नेतृत्व की पूरी रणनीति प्रभावित होगी। संभवतः यही कारण है कि दोनों नेताओं को सार्वजनिक बयानबाजी में संयम बरतने की हिदायत दी गई है।

हालांकि पिछले कुछ समय से कुछ भाजपा नेता और गहलोत विरोधी समूह सोशल मीडिया पर यह नैरेटिव गढ़ने की कोशिश कर रहे हैं कि राजस्थान में गहलोत युग अब अवसान की ओर है, लेकिन फिलहाल ऐसा संभव नहीं दिखता। कांग्रेस नेतृत्व यह भलीभांति जानता है कि 2023 की हार के बावजूद गहलोत आज भी पार्टी के सबसे अनुभवी चुनावी रणनीतिकारों में शामिल हैं। हाल के दिनों में भी वे लगातार भाजपा सरकार पर हमलावर हैं और राष्ट्रीय मुद्दों से लेकर राजस्थान के स्थानीय मुद्दों तक सरकार को घेरते रहे हैं।

सत्ता का आधा सफर, परीक्षा अभी बाकी

भजनलाल सरकार ने कार्यकाल का आधा सफर तय कर लिया है, लेकिन वित्तीय संकट, प्रशासनिक समन्वय, युवाओं की अपेक्षाएं और स्थानीय निकाय चुनाव जैसी चुनौतियां अभी भी सामने हैं। ऐसे में बचे हुए ढाई वर्ष सत्ता और संगठन के तालमेल की असली परीक्षा होंगे, जिन पर 2028 में भाजपा की सत्ता वापसी की संभावनाएं निर्भर करेंगी।

राजेश कसेरा,
वरिष्ठ पत्रकार

राजस्थान में भजनलाल शर्मा के नेतृत्व में भारतीय जनता पार्टी की डबल इंजन सरकार ने अपना आधा कार्यकाल पूरा कर लिया है। बीते ढाई वर्ष के दौरान सरकार ने कुछ बड़े फैसलों पर काम किया तो कई चुनौतियों ने विपक्ष को हमलावर होने का मौका भी दिया। ऐसे में बचे हुए कार्यकाल में प्रदेश सरकार और भाजपा संगठन के समक्ष सबसे बड़ा काम और जिम्मा फिर से सत्ता में आने तथा परंपरा को बदलने का होगा। राज्य में बीते कई दशकों से कांग्रेस और भाजपा की सरकारें बारी-बारी से आती रही हैं। कोई भी प्रमुख पार्टी यहां दोबारा सत्ता में वापसी नहीं कर सकी है। हाल ही में पश्चिम बंगाल में बड़ी जीत हासिल करने के बाद भाजपा की नजर 2027 में पंजाब और हिमाचल प्रदेश समेत सात राज्यों के चुनावों के साथ 2028 में होने वाले विधानसभा चुनावों पर भी टिकी होगी। पंजाब में आम आदमी पार्टी की सरकार है तो हिमाचल में कांग्रेस की। दोनों ही बड़े राज्यों में सत्ता पर काबिज होने के लिए भाजपा ने तैयारियां तेज कर दी हैं। वहीं, 2028 में राजस्थान के साथ मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, तेलंगाना और मिजोरम में चुनाव होंगे। इनमें भी जहां भाजपा की सरकारें हैं, वहां जीत के लिए जमकर पसीना बहाना पड़ेगा।

इधर, राजस्थान में आने वाले कुछ महीनों में भाजपा सरकार और संगठन के सामने सबसे बड़ा टास्क स्थानीय निकाय और पंचायत चुनावों का होगा। साथ ही बोर्ड, आयोग, प्राधिकरण और अकादमियों में राजनीतिक नियुक्तियों के साथ सरकार में बदलाव को लेकर भी सियासी दांव खेला जाएगा। इसकी शुरुआत राजस्थान लोक सेवा आयोग और माध्यमिक शिक्षा बोर्ड में हाल ही में की गई नियुक्तियों से हो गई है। सरकार ने आरपीएससी में प्रो. संतोष आनंद और डॉ. दीपक कुमार शर्मा को बतौर सदस्य नियुक्त किया तो माध्यमिक शिक्षा बोर्ड में हनुमानसिंह राठौड़ को अध्यक्ष बनाया गया। करीब 11 महीने के अंतराल के बाद हुई इन नियुक्तियों को सरकार की ओर से राजनीतिक और संवैधानिक पदों पर नई नियुक्तियों के संकेत के रूप में देखा गया। इन नियुक्तियों के साथ भाजपा सरकार की ओर से की गई राजनीतिक और संवैधानिक नियुक्तियों की संख्या बढ़कर 12 हो गई है। इससे पहले राज्य वित्त आयोग के अध्यक्ष के रूप में अरुण चतुर्वेदी की नियुक्ति अगस्त 2025 में हुई थी।

महत्वपूर्ण पदों पर जल्द नियुक्तियों के आसार

राजनीतिक विश्लेषकों की मानें तो राजस्थान में आमतौर पर सरकारें कार्यकाल के मध्य चरण में बोर्डों, आयोगों और वैधानिक संस्थाओं में नियुक्तियों की प्रक्रिया तेज करती हैं। भाजपा सरकार भी अपने कार्यकाल के मध्य बिंदु को पार कर चुकी है, इसलिए कई महत्वपूर्ण पदों पर जल्द नियुक्तियां होने की संभावना है। वर्तमान में लोकायुक्त समेत कई महत्वपूर्ण संस्थाओं और आयोगों के शीर्ष पद खाली पड़े हैं। पूर्व में कुछ आयोगों में नियुक्तियों में देरी को लेकर राजस्थान हाईकोर्ट को भी हस्तक्षेप करना पड़ा था। आने वाले दिनों में उन बड़ी संस्थाओं पर सबकी नजरें टिकी रहेंगी, जिनके अध्यक्षों को पूर्ववर्ती कांग्रेस सरकार ने कैबिनेट मंत्री का दर्जा दिया था। इनमें बीस सूत्री कार्यक्रम एवं समन्वय समिति, राजस्थान खादी एवं ग्रामोद्योग बोर्ड और राजस्थान राज्य कृषि उद्योग विकास बोर्ड प्रमुख हैं। कांग्रेस सरकार ने अपने कार्यकाल में 100 से अधिक राजनीतिक नियुक्तियां की थीं। इनमें चार नेताओं को कैबिनेट मंत्री और 31 से अधिक को राज्य मंत्री का दर्जा दिया गया था। कई नियुक्तियां विधानसभा चुनाव से ठीक पहले हुई थीं और कुछ नियुक्त व्यक्ति आचार संहिता लागू होने के कारण कार्यभार तक ग्रहण नहीं कर पाए थे।

भाजपा सरकार राजस्थान हेरिटेज संरक्षण प्राधिकरण, किसान आयोग, राज्य पशु कल्याण बोर्ड, सैनिक कल्याण सलाहकार समिति, अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास आयोग, देवनारायण बोर्ड, श्रीयादे माटी कला बोर्ड, विश्वकर्मा कौशल विकास बोर्ड, राज्य वित्त आयोग, आरपीएससी और आरबीएसई सहित 11 प्रमुख संस्थाओं में नियुक्तियां कर चुकी है।

इन आयोगों और बोर्डों को मिले धणी-धोरी

भाजपा ने राजस्थान में बीते दिनों नए प्रदेश संगठन महामंत्री अजेय कुमार की नियुक्ति की। उन्हें पूर्व संगठन महामंत्री चंद्रशेखर के स्थान पर भेजा गया। राजस्थान में भाजपा सरकार के गठन के बाद यह पहला मौका होगा, जब स्थानीय निकाय और पंचायत चुनाव नए संगठन महामंत्री के नेतृत्व में लड़े जाएंगे। ये चुनाव वर्ष 2028 के विधानसभा चुनावों का सेमीफाइनल होंगे। पंचायत और निकाय चुनावों के परिणाम केवल स्थानीय सत्ता का फैसला नहीं करेंगे, बल्कि यह संकेत भी देंगे कि प्रदेश में भाजपा सरकार और संगठन के प्रति जनता का भरोसा कितना मजबूत बना हुआ है। वहीं, सरकार और संगठन के बीच बेहतर तालमेल स्थापित करना भी अजेय कुमार की सबसे अहम जिम्मेदारी होगी। क्योंकि भाजपा की कार्यशैली ऐसी है कि यदि सरकार की योजनाओं और उपलब्धियों को प्रभावी तरीके से जनता तक पहुंचाया जाए तो जीत की राह आसान हो जाती है। इसके लिए भाजपा संगठन काम करता है और बूथ स्तर तक मजबूत नेटवर्क, कार्यकर्ता संवाद तथा जनसंपर्क अभियान चलाने की रणनीति बनाता है। निकाय चुनावों के दौरान सत्ता और संगठन का यही तालमेल जीत की राह तैयार करेगा।

बचे कार्यकाल में इन चुनौतियों से निपटना होगा

सरकार के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती प्रदेश पर गहराता वित्तीय संकट है। पिछली सरकारों की योजनाओं और भारी कर्ज के बोझ के कारण सरकार खाली खजाने की समस्या से जूझ रही है। इसके चलते नगरीय निकायों और विभागों के लिए बजट की कमी बड़ी बाधा बनी हुई है। इससे स्थानीय विकास कार्य प्रभावित हो रहे हैं। प्रमुख योजनाओं को निरंतर फंड देना और राज्य के विकास के लिए नए संसाधन जुटाना सरकार के लिए कड़ी परीक्षा साबित हो रहा है। दूसरी बड़ी चुनौती नौकरशाही और प्रशासनिक नियंत्रण को लेकर है। मंत्रियों, विधायकों और अधिकारियों के बीच समन्वय की कमी के कारण कलह की खबरें अक्सर सामने आती हैं। इसके कारण निर्णय और क्रियान्वयन के बीच की खाई बढ़ती जा रही है। सरकार ने कई नीतियां और घोषणाएं कीं, लेकिन जमीनी स्तर पर नौकरशाही में तालमेल बैठाकर उन्हें त्वरित गति से लागू करना बीते ढाई वर्षों में बड़ी चुनौती बना रहा। इसी तरह रोजगार और पेपर लीक के कारण सरकार पर युवाओं का दबाव बना रहा। पेपर लीक प्रकरण में बड़े मगरमच्छों पर कार्रवाई नहीं होने से विपक्ष भी सरकार पर कड़े सवाल उठाता रहा। खासकर कांग्रेस के प्रदेशाध्यक्ष गोविंदसिंह डोटासरा सरकार को इस मसले पर घेरते रहे। वहीं, ढाई लाख नौकरियां और अन्य रोजगार सृजन के वादों को पूरा करने की मांग युवाओं के बीच बनी हुई है। कांग्रेस की पिछली गहलोत सरकार को युवाओं की नाराजगी सबसे ज्यादा भारी पड़ी थी। ऐसे में सरकार के समक्ष युवाओं को साधे रखना बड़ी चुनौती बना रहेगा।

इन बड़ी योजनाओं पर काम दिखाना ही होगा

मुख्यमंत्री शर्मा 292 चुनावी संकल्पों में से 75 फीसदी से ज्यादा को पूरा किए जाने पर अपनी पीठ थपथपा रहे हैं। वे बार-बार इस बात को दोहरा रहे हैं कि राष्ट्रीय योजनाओं के क्रियान्वयन में राजस्थान अग्रणी प्रदेश बन गया है। उनकी सरकार ने कांग्रेस के पिछले कार्यकाल की तुलना में तेज गति से काम किया है। लेकिन जिन बड़ी योजनाओं को सरकार ने धरातल पर उतारा है, उनके नतीजों को लेकर संशय बना हुआ है। मसलन, पूर्वी राजस्थान नहर परियोजना (ईआरसीपी) की डीपीआर कब तैयार होगी और 21 जिलों को सिंचाई तथा पेयजल का लाभ कैसे मिलेगा? इसी तरह राइजिंग राजस्थान ग्लोबल इन्वेस्टमेंट समिट में हुए 35 लाख करोड़ रुपये के एमओयू में से प्रदेश में कितना निवेश आएगा और रोजगार के कितने अवसर पैदा होंगे तथा किस तरह राज्य की किस्मत चमकेगी? पर्यटन नीति, टाउनशिप नीति, ऊर्जा नीति और मेडिकल टूरिज्म नीति तो घोषित कर दी गई हैं, लेकिन इन पर काम अभी फाइलों में दौड़ रहा है। धरातल पर इन्हें साकार करना सरकार के लिए कठिन काम होगा।

आसान नहीं वरिष्ठ नेताओं को साथ लेकर चलना

सरकार के मुखिया भजनलाल और संगठन के मुखिया प्रदेश अध्यक्ष मदन राठौड़ के लिए घर के भीतर तालमेल बिठाना भी बचे हुए ढाई वर्षों और सत्ता वापसी के लिए कठिन लक्ष्य होगा। राज्यसभा की दो सीटों के लिए पूर्व अध्यक्ष सतीश पूनिया और राष्ट्रीय महासचिव अलका गुर्जर को भेजने के बाद भी राज्य में कई अन्य वरिष्ठ नेता हैं, जिन्हें साथ लेकर चलना चुनौतीपूर्ण होगा। पूर्व मुख्यमंत्री वसुंधरा राजे और राजेन्द्र राठौड़ जैसे कई बड़े नेता फिलहाल राज्य की सत्ता से दूर हैं और संगठन के काम में लगे हैं। पूनिया और गुर्जर को राज्यसभा में भेजकर शीर्ष नेतृत्व ने राजस्थान में बड़े नेताओं और उनके समर्थकों की नाराजगी दूर करने का प्रयास किया। साथ ही जातिगत समीकरण भी साध दिए। जाट और गुर्जर समुदाय लंबे समय से खुद को सत्ता में भागीदारी से दूर मानकर अंदरखाने नाराज चल रहे थे। आने वाले समय में सरकार और संगठन के प्रयास इसी दिशा में होंगे कि वे सबको साथ लेकर आगे बढ़ें। खासकर राजनीतिक नियुक्तियों में जातिगत संतुलन बनाने पर काम करें।

पाकिस्तान की बेचैन सरहदें

हरीश मलिक,
✍ वरिष्ठ पत्रकार एवं विश्लेषक

आर्थिक संकट, बढ़ता आतंकवाद, सेना का वर्चस्व और बलूचिस्तान से पीओके तक फैलता असंतोष पाकिस्तान को एक निर्णायक मोड़ पर ले आया है। सवाल सिर्फ सत्ता परिवर्तन का नहीं, बल्कि उस राष्ट्रीय सोच का है जिसने दशकों से उसकी नीतियों को दिशा दी है।

कभी दक्षिण एशिया में अपनी सामरिक स्थिति और परमाणु शक्ति के कारण स्वयं को क्षेत्रीय शक्ति के रूप में स्थापित करने वाला पाकिस्तान आज अनेक आंतरिक चुनौतियों से जूझ रहा है। आर्थिक संकट, राजनीतिक अस्थिरता, आतंकवाद की पुनरावृत्ति, बलूचिस्तान में अलगाववादी गतिविधियां, खैबर-पख्तूनख्वा में बढ़ती हिंसा और पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर (पीओके) में उभरता असंतोष उसके सामने गंभीर प्रश्न खड़े कर रहे हैं। दशकों तक सुरक्षा-केंद्रित नीतियों और सैन्य प्रभाव के बीच विकसित हुई व्यवस्था अब नई चुनौतियों का सामना कर रही है। हालात ऐसे हैं कि पाकिस्तान के सामने केवल सरकार बदलने का नहीं, बल्कि शासन, विकास और राष्ट्रीय प्राथमिकताओं पर पुनर्विचार का प्रश्न भी खड़ा हो गया है।

रणनीतिक नीति से आंतरिक संकट तक

पाकिस्तान की सुरक्षा नीति का सबसे विवादास्पद पहलू यह रहा है कि उसने कुछ चरमपंथी समूहों को क्षेत्रीय रणनीति के उपकरण के रूप में देखा। लेकिन समय के साथ यही नीति उसके लिए गंभीर चुनौती बन गई। खैबर-पख्तूनख्वा और उससे लगे क्षेत्रों में तहरीक-ए-तालिबान पाकिस्तान (टीटीपी) की गतिविधियां लगातार बढ़ी हैं। हाल के महीनों में हुए कई हमलों ने सुरक्षा एजेंसियों और आम नागरिकों दोनों को प्रभावित किया है। इससे स्पष्ट होता है कि आतंकवाद अब केवल क्षेत्रीय राजनीति का विषय नहीं रहा, बल्कि पाकिस्तान की आंतरिक स्थिरता के लिए भी बड़ा खतरा बन चुका है।

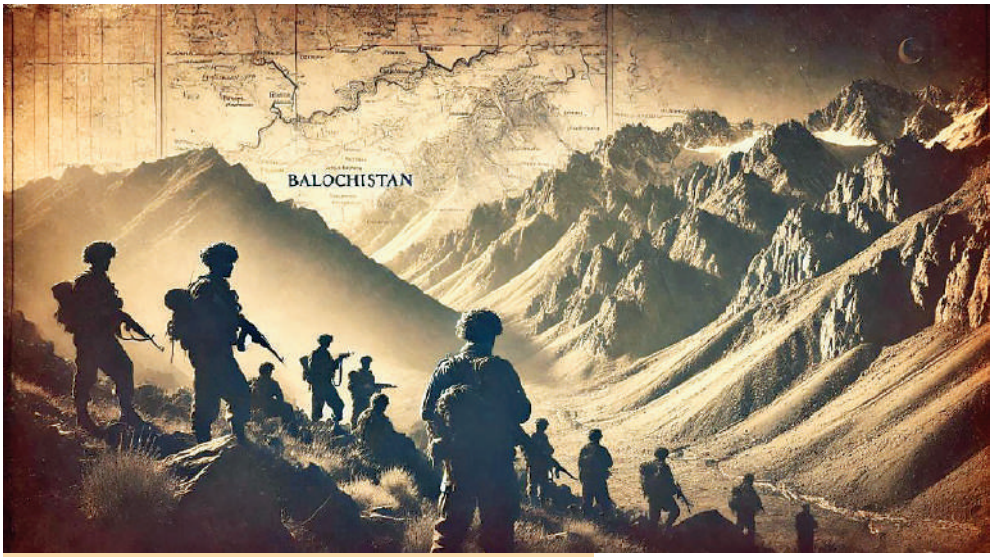

बलूचिस्तान : संसाधनों की धरती पर विद्रोह की आग

पाकिस्तान का सबसे बड़ा प्रांत बलूचिस्तान प्राकृतिक गैस, सोना, तांबा और समुद्री संसाधनों से समृद्ध है। ग्वादर बंदरगाह और चीन-पाकिस्तान आर्थिक गलियारा को पाकिस्तान अपनी आर्थिक क्रांति की आधारशिला बताता है, लेकिन स्थानीय बलूच समूहों का लंबे समय से आरोप रहा है कि उनके क्षेत्र की संपत्ति का लाभ उन्हें नहीं मिलता। इस क्षेत्र से निकलने वाले संसाधनों का उपयोग पाकिस्तान के अन्य हिस्सों के विकास के लिए किया जाता है। इसी असंतोष ने कई दशकों से बलूच विद्रोह को जन्म दिया है। बलूच राष्ट्रवादी संगठनों का आरोप है कि क्षेत्र के संसाधनों का पर्याप्त लाभ स्थानीय आबादी तक नहीं पहुंचता। वहीं पाकिस्तान सरकार का कहना है कि विकास परियोजनाओं के माध्यम से क्षेत्र में निवेश बढ़ाया जा रहा है। हालांकि दशकों से जारी संघर्ष, जबरन गुमशुदगी के आरोप और सुरक्षा बलों के साथ टकराव ने बलूचिस्तान को पाकिस्तान की सबसे बड़ी आंतरिक चुनौतियों में शामिल कर दिया है। इसीलिए बलूच राष्ट्रवादी संगठन पाकिस्तान सरकार और सेना पर दमन और मानवाधिकार उल्लंघन के आरोप लगाते रहे हैं। दशकों से चल रहे विद्रोह, जबरन गुमशुदगी के आरोप और सेना के साथ संघर्ष ने इस क्षेत्र को पाकिस्तान की सबसे बड़ी आंतरिक सुरक्षा चुनौतियों में बदल दिया है। बलूच अलगाववादी संगठन लगातार पाकिस्तान की सुरक्षा संस्थाओं और चीन-पाकिस्तान आर्थिक गलियारा से जुड़ी परियोजनाओं को निशाना बनाते रहे हैं। यह विद्रोह पाक की क्षेत्रीय स्थिरता के लिए गंभीर चुनौती बना हुआ है।

पीओके : अधिकारों, संसाधनों और प्रतिनिधित्व का सवाल

पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर में भी हालात बदतर हैं। पिछले कुछ वर्षों में यहां महंगाई, बेरोजगारी और प्रशासनिक अधिकारों की कमी जैसे मुद्दों को लेकर आंदोलन हुए हैं। स्थानीय संगठनों और आम नागरिकों ने सड़कों पर उतरकर आर्थिक राहत और राजनीतिक अधिकारों की मांग की है। यह असंतोष केवल आर्थिक नहीं, बल्कि प्रशासनिक अधिकारों और संसाधनों के बंटवारे से जुड़े लंबे समय से चले आ रहे सवालों से भी जुड़ा हुआ है। इससे पाकिस्तान के उस दावे को खुलेआम चुनौती मिलती है कि उसके नियंत्रण वाले क्षेत्रों में पूरी स्थिरता और संतोष का वातावरण है।

बढ़ती राजनीतिक आकांक्षाएं और विरोध प्रदर्शन

पीओके में विभिन्न समूह अधिक स्वायत्तता, राजनीतिक अधिकारों और बेहतर प्रशासनिक व्यवस्था की मांग कर रहे हैं। गिलगित-बाल्टिस्तान सहित कई क्षेत्रों में हुए विरोध प्रदर्शनों ने यह संकेत दिया है कि स्थानीय आबादी के एक वर्ग में शासन और संसाधनों के बंटवारे को लेकर असंतोष मौजूद है। इन आंदोलनों के दौरान कई बार प्रमुख मार्गों और व्यापारिक संपर्कों पर भी असर पड़ा है।

एक भूगोल, दो तस्वीरें : जे एण्ड के और पीओके

1947 के विभाजन की त्रासदी यह भी रही कि एक ही सांस्कृतिक और भौगोलिक विरासत वाले क्षेत्रों की विकास यात्रा अलग-अलग दिशाओं में चली गई। भारत प्रशासित जम्मू-कश्मीर में सड़क, स्वास्थ्य, शिक्षा, पर्यटन, तकनीक और आधारभूत संरचना के क्षेत्रों में बड़े निवेश हुए हैं, वहीं पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर के क्षेत्रों में विकास, रोजगार और आधारभूत सुविधाओं की बदतर हालात को लेकर लगातार शिकायतें सामने आती रही हैं। दोनों क्षेत्रों की तुलना लंबे समय से राजनीतिक बहस का विषय रही है। भारत प्रशासित जम्मू-कश्मीर और पीओके की विकास यात्रा लंबे समय से राजनीतिक बहस का विषय रही है। भारत प्रशासित क्षेत्रों में हाल के वर्षों में सड़क, रेल, स्वास्थ्य, पर्यटन और आधारभूत ढांचे के विकास पर विशेष ध्यान दिया गया है। दूसरी ओर पीओके में विकास, रोजगार और संसाधनों के वितरण को लेकर समय-समय पर असंतोष सामने आता रहा है। यही वजह है कि पीओके के कई हिस्सों में स्थानीय असंतोष बार-बार सामने आता है।

पीओके पर भारत का संवैधानिक और कानूनी दृष्टिकोण

- भारतीय संविधान के अनुच्छेद 1 के अनुसार भारत एक संघ है, जिसमें राज्य और केंद्र शासित प्रदेश हैं। जम्मू और कश्मीर, जिसमें पीओके भी शामिल है, भारतीय संघ का अभिन्न हिस्सा है। भारतीय संसद ने 1994 में सर्वसम्मति से एक प्रस्ताव पारित किया था, जिसमें कहा गया था कि पाकिस्तान के कब्जे में कश्मीर का जो हिस्सा (पीओके) है वो भारत का हिस्सा है और इसे वापस लिया जाएगा।

- भारतीय नागरिकता अधिनियम, 1955 के अनुसार, आप जन्म से, वंशानुगत आधार पर और रजिस्ट्रेशन के माध्यम से भारत की नागरिकता प्राप्त कर सकते हैं। भारतीय संविधान के मुताबिक, पीओके के लोग पहले से ही भारत के नागरिक माने जाते हैं, क्योंकि भारतीय संविधान जम्मू और कश्मीर, जिसमें पीओके भी शामिल है, के सभी निवासियों को भारतीय नागरिक मानता है।
- पीओके की जनता का आरोप यह है कि पाकिस्तान ने इस क्षेत्र को कभी भी विकास की मुख्यधारा में शामिल ही नहीं किया। प्राकृतिक संसाधनों से भरपूर होने के बावजूद यहां उद्योग, शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार के अवसर अत्यंत सीमित हैं। परिणामस्वरूप निराश युवाओं में भारत में विलय की चाहत नजर आने लगी है।
- 23वें कारगिल दिवस पर जम्मू में केंद्रीय रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह ने कहा कि पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर भारत का अभिन्न हिस्सा था, भारत का हिस्सा है और हमेशा-हमेशा रहेगा।

खैबर-पख्तूनख्वा : आतंकवाद का लौटता हुआ साया

पाकिस्तान का खैबर-पख्तूनख्वा प्रांत एक बार फिर आतंकवादी हिंसा की गंभीर चुनौती का सामना कर रहा है। तहरीक-ए-तालिबान पाकिस्तान (टीटीपी) जैसे संगठनों के हमले सुरक्षा बलों और आम नागरिकों दोनों को प्रभावित कर रहे हैं। विडंबना यह है कि जिन चरमपंथी समूहों को कभी क्षेत्रीय रणनीति के तहत सहन किया गया या उपयोगी माना गया, वही अब पाकिस्तान की आंतरिक सुरक्षा के लिए सबसे बड़ा खतरा बन गए हैं। इससे वहां सामान्य जनजीवन पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ा है।

शारदा पीठ और सांस्कृतिक विरासत का प्रश्न

हमारी प्राचीन सांस्कृतिक धरोहरों में शामिल शारदा पीठ पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर में स्थित है। हिंदू परंपरा में इसे ज्ञान की देवी सरस्वती से जुड़ा महत्वपूर्ण तीर्थ माना जाता है। भारत में कई नेताओं और सांस्कृतिक संगठनों ने इसके दर्शन खोलने और संरक्षण को लेकर अपनी इच्छा व्यक्त की है। रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह ने कहा है कि बाबा अमरनाथ शिव के रूप में हमारे साथ हैं तो मां शारदा की शक्तिपीठ एलओसी के दूसरी तरफ कैसे रह सकती है? कश्मीरी पंडितों की कुलदेवी मां शारदा की इस पीठ पर हिंदू देवी सरस्वती का मंदिर है, जिन्हें शारदा भी कहा जाता है।

आर्थिक चुनौतियों से घिरा पाकिस्तान

पाकिस्तान की आर्थिक कहानी भी चिंताजनक है। बार-बार अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के दरवाजे पर दस्तक देना उसकी आर्थिक नीतियों की विफलता को दर्शाता है। पाकिस्तान के आर्थिक सर्वेक्षण 2024-25 के अनुसार मार्च 2025 तक देश का सार्वजनिक कर्ज लगभग 76 लाख करोड़ पाकिस्तानी रुपये तक पहुंच गया था। इसके अलावा लगभग 87 अरब अमेरिकी डॉलर का बाहरी कर्ज भी था। पाक में वैश्विक संकट के चलते हाल के वर्षों में महंगाई भी बढ़ी है। यहां की अर्थव्यवस्था अब भी आईएमएफ की कठोर शर्तों, बिजली दरों में वृद्धि और कर सुधारों के दबाव में है। देश को बार-बार राहत पैकेजों की आवश्यकता पड़ रही है और ऊर्जा व ईंधन क्षेत्र का संकट अभी भी बड़ी चुनौतियों में शामिल है।

राजनीति, सेना व लोकतंत्र चुनौती

पाकिस्तान के इतिहास का एक स्थायी सच यह भी रहा है कि वहां सत्ता के दो केंद्र हमेशा मौजूद रहे हैं। एक निर्वाचित सरकार और दूसरा सैन्य प्रतिष्ठान। कई प्रधानमंत्रियों की सत्ता से विदाई और राजनीतिक दलों के बीच लगातार संघर्ष इस बात को दर्शाते हैं कि पाकिस्तान में लोकतांत्रिक संस्थाएं अभी भी पूरी तरह स्वतंत्र और मजबूत नहीं हो पाई हैं। इमरान खान की गिरफ्तारी के बाद उत्पन्न राजनीतिक तनाव और उनके समर्थकों तथा सुरक्षा एजेंसियों के बीच टकराव ने यह स्पष्ट कर दिया कि पाकिस्तान की राजनीति केवल चुनावों से संचालित नहीं होती, बल्कि सेना और सत्ता प्रतिष्ठान की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण बनी रहती है।

भारत के लिए रणनीतिक निहितार्थ

पाकिस्तान के आंतरिक संकट भारत के लिए महत्वपूर्ण रणनीतिक निहितार्थ रखते हैं। पहला, पाकिस्तान की सेना और सुरक्षा एजेंसियां अब बलूचिस्तान, खैबर-पख्तूनख्वा, पीओके और आतंकी हिंसा जैसी घरेलू चुनौतियों में अधिक व्यस्त हैं, जिससे भारत पर उनका ध्यान अपेक्षाकृत कम हो सकता है। दूसरा, ऑपरेशन सिंदूर ने भारत की नई सुरक्षा नीति को स्पष्ट किया, जिसके तहत सीमा पार आतंकवाद का जवाब निर्णायक सैन्य कार्रवाई से दिया गया। तीसरा, अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पाकिस्तान की आतंकवाद समर्थक छवि और अधिक कमजोर हुई है। हालांकि, परमाणु शक्ति संपन्न पड़ोसी की अस्थिरता भारत के लिए सीमा सुरक्षा, शरणार्थी संकट और क्षेत्रीय अस्थिरता जैसी नई चुनौतियां भी पैदा कर सकती है। दूसरी ओर, पाकिस्तान में बढ़ता असंतोष उसके गहरे राजनीतिक, आर्थिक और संस्थागत संकट को दर्शाता है। भविष्य में उसकी स्थिरता लोकतांत्रिक संस्थाओं को मजबूत करने, आर्थिक सुधार लागू करने और क्षेत्रीय सुरक्षा संबंधी समस्याओं के समाधान पर निर्भर करेगी।

मातृत्व की राह में मौत का साया

ज्ञानचंद पाटनी,
वरिष्ठ पत्रकार

राजस्थान के कोटा, बीकानेर और जोधपुर के सरकारी अस्पतालों में सिजेरियन डिलीवरी के बाद प्रसूताओं की मौत, किडनी फेल होने और संक्रमण के मामलों ने मातृ स्वास्थ्य सेवाओं की गुणवत्ता पर गंभीर सवाल खड़े कर दिए हैं। घटनाओं ने अस्पताल प्रबंधन, दवा गुणवत्ता, संक्रमण नियंत्रण और स्वास्थ्य व्यवस्था की जवाबदेही को लेकर व्यापक चिंता पैदा की है।

राजस्थान के सरकारी अस्पतालों में प्रसूताओं की मौत और सिजेरियन डिलीवरी के बाद गंभीर संक्रमण के मामलों ने राज्य की स्वास्थ्य व्यवस्था को कठघरे में खड़ा कर दिया है। कोटा और बीकानेर के मेडिकल कॉलेज अस्पतालों में प्रसूताओं की मृत्यु तथा किडनी फेल होने की घटनाओं के बाद जोधपुर के पावटा अस्पताल में भी सिजेरियन डिलीवरी के बाद महिलाओं की तबीयत बिगड़ने के मामले सामने आए। इन घटनाओं ने न केवल चिकित्सा सेवाओं की गुणवत्ता पर सवाल खड़े किए हैं, बल्कि मातृ स्वास्थ्य सुरक्षा के सरकारी दावों की भी परीक्षा ले ली है।

राजस्थान सरकार वर्षों से संस्थागत प्रसव को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न योजनाएं चला रही है। महिलाओं को अस्पतालों में प्रसव कराने के लिए आर्थिक प्रोत्साहन दिया जाता है और सुरक्षित मातृत्व को स्वास्थ्य नीति की प्राथमिकता बताया जाता है। लेकिन जब मेडिकल कॉलेजों से जुड़े बड़े सरकारी अस्पतालों में ही प्रसूताओं की मौत होने लगे और ऑपरेशन के बाद संक्रमण से उनकी किडनी तक प्रभावित होने लगे, तो यह केवल चिकित्सा लापरवाही का मामला नहीं रह जाता, बल्कि पूरे स्वास्थ्य तंत्र की विश्वसनीयता पर प्रश्नचिह्न बन जाता है।

यह पहली बार नहीं है जब राजस्थान की स्वास्थ्य सेवाएं विवादों में आई हों। हाल के वर्षों में आदिवासी बहुल प्रतापगढ़ और सलूंबर जिलों में बच्चों की मौतों ने ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाओं की कमजोरी उजागर की थी। इससे पहले कफ सिरप से बच्चों की मौतों के मामलों ने सरकारी अस्पतालों में उपलब्ध दवाओं की गुणवत्ता पर सवाल उठाए थे। अब प्रसूताओं की मौतों के पीछे नकली या गुणवत्ताहीन ऑक्सीटोसिन इंजेक्शन की आशंका सामने आ रही है। यदि जांच में यह तथ्य सही साबित होता है तो यह केवल एक अस्पताल की विफलता नहीं, बल्कि दवा निगरानी व्यवस्था और सरकारी नियंत्रण प्रणाली की गंभीर असफलता होगी।

कोटा से शुरू हुआ संकट

राजस्थान में इस पूरे विवाद की शुरुआत कोटा से हुई, जहां न्यू मेडिकल कॉलेज और जेके लोन अस्पताल में सिजेरियन डिलीवरी के बाद पांच प्रसूताओं की मृत्यु हो गई। इसके अलावा कई महिलाओं की किडनी प्रभावित होने की खबरों ने पूरे प्रदेश में चिंता पैदा कर दी।

मामले की गंभीरता को देखते हुए स्थानीय स्तर पर जांच समिति गठित की गई। बाद में जयपुर के सवाई मानसिंह अस्पताल के विशेषज्ञों की टीम ने जांच की। अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान (एम्स) के विशेषज्ञों को भी जांच में शामिल किया गया। इन सभी रिपोर्टों के आधार पर एक उच्च स्तरीय समिति को अंतिम निष्कर्ष तैयार करने की जिम्मेदारी सौंपी गई है।

हालांकि अंतिम रिपोर्ट अभी सामने नहीं आई है, लेकिन शुरुआती जांचों में संक्रमण, दवा की गुणवत्ता और अस्पताल प्रबंधन से जुड़े कई सवाल उभरकर सामने आए हैं।

बीकानेर में भी दोहराई गई त्रासदी

कोटा की घटना का असर थमा भी नहीं था कि बीकानेर के पीबीएम अस्पताल से इसी तरह की खबरें आने लगीं। सरदार पटेल मेडिकल कॉलेज से जुड़े इस अस्पताल में दो प्रसूताओं की मृत्यु हो गई, जबकि छह महिलाओं की किडनी प्रभावित हुई। कई मरीजों को बार-बार डायलिसिस की आवश्यकता पड़ी।

यहां भी ऑक्सीटोसिन इंजेक्शन को लेकर संदेह व्यक्त किया गया है। कुछ मरीजों के परिजनों ने आरोप लगाया कि इंजेक्शन लगाए जाने के बाद महिलाओं की हालत अचानक बिगड़ने लगी। हालांकि चिकित्सा विशेषज्ञों का मानना है कि वास्तविक कारणों का पता विस्तृत जांच के बाद ही चल सकेगा, लेकिन अस्पतालों में संक्रमण नियंत्रण और ऑपरेशन थिएटर की स्वच्छता पर गंभीर प्रश्न उठना स्वाभाविक है।

जोधपुर में बढ़ी चिंता

कोटा और बीकानेर के बाद जोधपुर के पावटा स्थित जिला अस्पताल में आठ महिलाओं की तबीयत सिजेरियन डिलीवरी के बाद बिगड़ गई। इनमें से दो महिलाओं में किडनी संक्रमण की पुष्टि हुई है। सभी ऑपरेशन एक ही दिन किए गए थे, जिससे संक्रमण के स्रोत को लेकर संदेह और गहरा गया।

स्थिति इतनी गंभीर मानी गई कि अस्पताल के ऑपरेशन थिएटर को सील कर जांच शुरू करनी पड़ी। यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि जिस दिन यह घटनाएं सामने आईं, उस दिन चिकित्सा मंत्री गजेंद्र सिंह खींवसर जोधपुर में ही मौजूद थे, लेकिन उन्हें तत्काल इसकी जानकारी नहीं मिल सकी। इससे स्वास्थ्य प्रशासन के भीतर सूचना प्रवाह और निगरानी तंत्र की प्रभावशीलता पर भी सवाल उठे हैं।

मातृ मृत्यु अनुपात में ठहराव

▪ इन घटनाओं के बीच हाल ही में सामने आए मातृ मृत्यु अनुपात (एमएमआर) के आंकड़े भी चिंता बढ़ाते हैं। सैंपल रजिस्ट्रेशन सिस्टम (एसआरएस) की रिपोर्ट के अनुसार राजस्थान का मातृ मृत्यु अनुपात 2021-23 में 86 था, जो 2022-24 में बढ़कर 87 हो गया है।

▪ पहली नजर में यह वृद्धि मामूली प्रतीत हो सकती है, लेकिन सार्वजनिक स्वास्थ्य विशेषज्ञ इसे चेतावनी संकेत मानते हैं। पिछले दो दशकों में मातृ मृत्यु दर में लगातार कमी लाने के प्रयास किए गए हैं। ऐसे में आंकड़ों का स्थिर रहना यह दर्शाता है कि सुधार की गति थम गई है।

▪ मातृ मृत्यु अनुपात किसी क्षेत्र में महिलाओं के प्रजनन स्वास्थ्य और स्वास्थ्य सेवाओं की गुणवत्ता का महत्वपूर्ण संकेतक माना जाता है। यह प्रति एक लाख जीवित जन्मों पर होने वाली मातृ मृत्यु की संख्या को दर्शाता है। संयुक्त राष्ट्र के सतत विकास लक्ष्यों के तहत वर्ष 2030 तक इस अनुपात को 70 से नीचे लाने का लक्ष्य रखा गया है। राजस्थान और भारत दोनों अभी इस लक्ष्य से पीछे हैं।

सिजेरियन डिलीवरी का बढ़ता चलन

▪ राजस्थान में सिजेरियन डिलीवरी की बढ़ती संख्या भी चर्चा का विषय बनी हुई है। नेशनल फैमिली हेल्थ सर्वे और अन्य अध्ययनों के अनुसार राज्य में औसतन 35 प्रतिशत प्रसव सिजेरियन पद्धति से हो रहे हैं। शहरी निजी अस्पतालों में यह दर लगभग 49.4 प्रतिशत तक पहुंच चुकी है।

▪ विश्व स्वास्थ्य संगठन का मानना है कि किसी भी समाज में 10 से 15 प्रतिशत सिजेरियन दर स्वास्थ्य आवश्यकताओं के अनुरूप मानी जा सकती है। इस दृष्टि से राजस्थान में सिजेरियन प्रसव का अनुपात काफी अधिक दिखाई देता है।

▪ हालांकि विशेषज्ञ यह भी स्पष्ट करते हैं कि केवल आंकड़ों के आधार पर निष्कर्ष निकालना उचित नहीं होगा। कई बार जटिल गर्भावस्था, उच्च रक्तचाप, भ्रूण की स्थिति या अन्य चिकित्सकीय कारणों से सिजेरियन डिलीवरी आवश्यक हो जाती है। इसलिए अनावश्यक सिजेरियन से बचना जितना जरूरी है, उतना ही आवश्यक यह भी है कि सामान्य प्रसव के नाम पर प्रसूता और शिशु की जान जोखिम में न डाली जाए।

क्या स्वास्थ्य व्यवस्था में संरचनात्मक खामियां हैं?

▪ राजस्थान के स्वास्थ्य क्षेत्र से जुड़े जानकार मानते हैं कि समस्या केवल किसी एक अस्पताल तक सीमित नहीं है। पिछले कुछ वर्षों में चिकित्सा एवं स्वास्थ्य विभाग में संविदा आधारित नियुक्तियों का दायरा लगातार बढ़ा है। वर्तमान में लगभग 20 हजार कर्मचारी विभिन्न पदों पर संविदा के आधार पर कार्यरत हैं।

▪ इनमें नर्सिंगकर्मी, फार्मासिस्ट, तकनीशियन और कंप्यूटर ऑपरेटर शामिल हैं। कम वेतन, सीमित सुविधाएं और नौकरी की असुरक्षा के बीच उनसे उच्च गुणवत्ता वाली सेवाओं की अपेक्षा करना कठिन हो जाता है। स्वास्थ्य सेवाओं की गुणवत्ता सीधे मानव संसाधन की क्षमता और प्रेरणा से जुड़ी होती है।

▪ विशेषज्ञों का मानना है कि यदि अस्पतालों में नियमित भर्ती, पर्याप्त प्रशिक्षण और जवाबदेही की मजबूत व्यवस्था नहीं होगी तो केवल भवन और उपकरण बढ़ा देने से स्वास्थ्य सेवाओं में अपेक्षित सुधार संभव नहीं है।

जिम्मेदारी तय करने की जरूरत

▪ पूर्व मुख्यमंत्री अशोक गहलोत ने इन घटनाओं को स्वास्थ्य व्यवस्था की गंभीर विफलता बताया है। उनका कहना है कि कोटा और बीकानेर की घटनाओं को सामान्य दुर्घटना मानकर नहीं टाला जा सकता। उन्होंने प्रभावित महिलाओं के दीर्घकालिक उपचार और आवश्यक होने पर किडनी प्रत्यारोपण का खर्च सरकार द्वारा वहन किए जाने की मांग भी उठाई है।

▪ दूसरी ओर चिकित्सा मंत्री गजेंद्र सिंह खींवसर का कहना है कि सरकारी अस्पताल सबसे जटिल और गंभीर मरीजों का इलाज करते हैं। कई मरीज निजी अस्पतालों से रेफर होकर सरकारी अस्पतालों में पहुंचते हैं, जहां उनकी स्थिति पहले से ही गंभीर होती है। ऐसे मामलों में मृत्यु का जोखिम स्वाभाविक रूप से अधिक रहता है।

▪ दोनों पक्षों के तर्क अपनी जगह हैं, लेकिन यह भी सच है कि यदि संक्रमण नियंत्रण, दवा गुणवत्ता और चिकित्सा प्रोटोकॉल के पालन में कहीं कमी पाई जाती है तो उसकी जिम्मेदारी तय करना अनिवार्य होगा। केवल जांच समितियां गठित कर देने से लोगों का भरोसा वापस नहीं आएगा।

वैश्विक परिप्रेक्ष्य में भारत

▪ मातृ मृत्यु केवल राजस्थान की समस्या नहीं है। अंतरराष्ट्रीय शोध पत्रिका 'द लैंसेट' में प्रकाशित एक अध्ययन के अनुसार दुनिया भर में होने वाली लगभग 36 प्रतिशत मातृ मौतें केवल पांच देशों नाइजीरिया, भारत, इथियोपिया, पाकिस्तान और कैमरून में होती हैं।

▪ वर्ष 2023 में भारत में लगभग 24,700 महिलाओं की मृत्यु मातृत्व संबंधी कारणों से हुई। यह आंकड़ा दुनिया में दूसरे स्थान पर है। विकसित राष्ट्र बनने की आकांक्षा रखने वाले भारत के लिए यह स्थिति गंभीर चिंता का विषय है।

आगे का रास्ता

मातृ मृत्यु को कम करने के लिए केवल अस्पतालों में सुविधाएं बढ़ाना पर्याप्त नहीं होगा। किशोरियों की शिक्षा, बाल विवाह पर रोक, एनीमिया और कुपोषण नियंत्रण, गर्भवती महिलाओं की नियमित जांच तथा उच्च जोखिम वाली गर्भावस्थाओं की समय पर पहचान जैसे कदम समान रूप से महत्वपूर्ण हैं।

इसके साथ ही अस्पतालों में संक्रमण नियंत्रण को सर्वोच्च प्राथमिकता देनी होगी। ऑपरेशन थिएटर, उपकरणों और दवाओं की गुणवत्ता पर कठोर निगरानी आवश्यक है। नकली या घटिया दवाओं की आपूर्ति रोकने के लिए दवा नियंत्रण तंत्र को और मजबूत बनाना होगा।

सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि स्वास्थ्य सेवाओं में संवेदनशीलता और जवाबदेही को संस्थागत संस्कृति का हिस्सा बनाया जाए। मातृत्व किसी महिला के जीवन का सबसे महत्वपूर्ण चरण होता है। यदि अस्पताल, जो सुरक्षा का प्रतीक होने चाहिए, वहीं भय और असुरक्षा का कारण बन जाएं तो यह किसी भी समाज के लिए गंभीर चेतावनी है।

राजस्थान की हालिया घटनाएं केवल कुछ अस्पतालों की कहानी नहीं हैं। वे उस व्यापक चुनौती का संकेत हैं, जिसमें स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता के साथ-साथ उनकी गुणवत्ता, निगरानी और जवाबदेही भी उतनी ही महत्वपूर्ण है। मातृत्व की राह सुरक्षित तभी बनेगी, जब व्यवस्था हर स्तर पर जीवन की रक्षा को अपनी सर्वोच्च प्राथमिकता बनाए।

भारत के दो ध्रुवः जुझारू हाशिया और कटे हुए परिसर

किताबी ज्ञान की दीवारें और हाशिए का असली संघर्ष

मणिमाला शर्मा,
मैनेजमेंट ट्रेनर

भारत के विश्वविद्यालय और जुझारू हाशिए का समाज दो समानांतर दुनिया बनते जा रहे हैं। शिक्षा को वास्तविक जीवन, स्थानीय अर्थव्यवस्था और व्यावहारिक अनुभवों से जोड़ना समय की सबसे बड़ी आवश्यकता है।

हाल ही में मेरा इंदौर जाना हुआ। गंतव्य आगे उज्जैन और ओंकारेश्वर था, लेकिन रास्ते में इंदौर भी पड़ा। यात्रा के दौरान अचानक आईआईटी इंदौर का विशाल और आकर्षक साइनबोर्ड नजर आया। उसके पीछे फैला आधुनिक और भव्य परिसर देश की उच्च शिक्षा की उपलब्धियों का प्रतीक लग रहा था।

लेकिन उसी सड़क पर कुछ ही दूरी पर एक दूसरा दृश्य भी मौजूद था। सड़क किनारे चाय की टपरियां, पोहे की रेहड़ियां, फल बेचते युवा और धूल-धुएं के बीच दिनभर मेहनत करते लगभग बीस-बाईस वर्ष के लड़के। कोई केतली में चाय उबाल रहा था, कोई ग्राहकों के लिए पोहे की प्लेटें सजा रहा था, तो कोई आम के टिकोरे बेच रहा था।

यह दृश्य केवल दो अलग-अलग जीवन स्थितियों का नहीं था; यह भारत के दो समानांतर संसारों का प्रतीक था। एक ओर उच्च शिक्षा संस्थानों में भविष्य गढ़ने की कोशिश करता युवा वर्ग, दूसरी ओर सीमित संसाधनों के बीच अपने श्रम, कौशल और उद्यमिता के बल पर जीवन का रास्ता बनाता हुआ भारत।

यहीं से एक सवाल जन्म लेता है कि क्या हमारे परिसर और समाज के बड़े हिस्से के बीच की दूरी लगातार बढ़ती जा रही है?

आपदा को चुनौती देता 'हाशिए का भारत'

जब हम 'हाशिए' की बात करते हैं, तो उसका अर्थ केवल गरीबी नहीं होता। इसमें वह विशाल भारत शामिल है जो औपचारिक अर्थव्यवस्था के बाहर रहते हुए भी देश की आर्थिक गतिविधियों को गति देता है। छोटे दुकानदार, रेहड़ी-पटरी वाले, कारीगर, स्वरोजगार से जुड़े लोग और सूक्ष्म उद्यमी इसी दुनिया का हिस्सा हैं।

इन लोगों के पास बड़ी कंपनियों जैसी सुरक्षा नहीं होती। न स्थायी वेतन, न बीमा, न सामाजिक प्रतिष्ठा। फिर भी परिस्थितियों के अनुसार स्वयं को ढाल लेने की उनकी क्षमता अद्भुत होती है। महामारी और लॉकडाउन के कठिन दौर में भी लाखों लोगों ने छोटे-छोटे उद्यमों, स्थानीय सेवाओं और वैकल्पिक रोजगार के माध्यम से जीवनयापन के रास्ते खोजे।

इनका ज्ञान किसी डिग्री या प्रमाणपत्र में दर्ज नहीं होता, यह अनुभव, जोखिम उठाने की क्षमता और रोजमर्रा के संघर्षों से अर्जित होता है। यही कारण है कि भारत की अनौपचारिक अर्थव्यवस्था आज भी करोड़ों लोगों के लिए आजीविका का आधार बनी हुई है।

हकीकत से दूर होते परिसर

- दूसरी ओर हमारे विश्वविद्यालय और कॉलेज हैं, जो ज्ञान, शोध और नवाचार के महत्वपूर्ण केंद्र हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि देश के विकास, विज्ञान, तकनीक और प्रशासनिक नेतृत्व के निर्माण में इन संस्थानों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।लेकिन इसके साथ एक चिंता भी उभरती है।
- आज बड़ी संख्या में छात्र डिग्रियां लेकर निकल रहे हैं, परंतु रोजगार बाजार बार-बार 'स्किल गैप' की समस्या की ओर संकेत करता है। अनेक उद्योगों का कहना है कि डिग्रीधारी युवाओं में व्यावहारिक कौशल, समस्या-समाधान क्षमता और वास्तविक कार्य-परिस्थितियों की समझ का अभाव है।
- समस्या शिक्षा के अस्तित्व की नहीं, बल्कि उसके समाज और बाजार से जुड़ाव की है। कई पाठ्यक्रम आज भी ऐसे ढांचे में संचालित हो रहे हैं जिनका वास्तविक जीवन की चुनौतियों से सीमित संबंध दिखाई देता है। परिणामस्वरूप, छात्रों के सामने डिग्री और रोजगार के बीच एक असहज दूरी खड़ी हो जाती है।
- निस्संदेह देश के प्रतिष्ठित संस्थानों से निकलने वाले हजारों युवा शोध, नवाचार और उद्यमिता में महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं। फिर भी यह प्रश्न बना हुआ है कि क्या हमारी शिक्षा व्यवस्था पर्याप्त संख्या में ऐसे युवा तैयार कर रही है जो समाज की वास्तविक समस्याओं को समझकर उनके समाधान विकसित कर सकें?

नुकसान किसका हो रहा है?

'जुझारू हाशिए' और 'कटे हुए परिसरों' के बीच बढ़ती दूरी का असर केवल शिक्षा तक सीमित नहीं है। इसके व्यापक सामाजिक और आर्थिक परिणाम हैं।

1. नीतियों और वास्तविकता के बीच दूरी

जब निर्णय लेने वाले लोग जमीनी परिस्थितियों को पर्याप्त रूप से नहीं समझते, तो अनेक योजनाएं और नीतियां व्यवहारिक स्तर पर अपेक्षित परिणाम नहीं दे पातीं। छोटे व्यापारियों, श्रमिकों और ग्रामीण समुदायों की वास्तविक चुनौतियां अक्सर कागजी दस्तावेजों में पूरी तरह प्रतिबिंबित नहीं हो पातीं।

2. युवाओं में बढ़ती निराशा

डिग्री प्राप्त करने के बाद रोजगार की अनिश्चितता कई युवाओं में निराशा और असुरक्षा की भावना पैदा करती है। उन्हें लगता है कि शिक्षा ने उन्हें ज्ञान तो दिया, लेकिन जीवन और रोजगार की वास्तविक चुनौतियों के लिए पर्याप्त रूप से तैयार नहीं किया।

3. संसाधनों का सीमित उपयोग

शिक्षा और शोध पर होने वाला निवेश तब अधिक सार्थक बनता है जब उसका लाभ समाज की वास्तविक समस्याओं के समाधान में दिखाई दे। यदि अकादमिक जगत और समाज के बीच संवाद कमजोर होगा, तो यह संभावना भी सीमित हो जाएगी।

आगे की राह : दोनों दुनिया को जोड़ना

भारत को यदि ज्ञान-आधारित और आत्मनिर्भर राष्ट्र बनना है, तो शिक्षा और अनुभव के बीच पुल बनाना होगा। इसके लिए कुछ ठोस कदम आवश्यक हैं।

व्यावहारिक और भारतीय संदर्भ आधारित पाठ्यक्रम... विदेशी उदाहरणों के साथ-साथ स्थानीय उद्यमों, सहकारी संस्थाओं, सामाजिक नवाचारों और छोटे व्यवसायों की सफल कहानियों को भी पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाया जाना चाहिए। छात्रों को अपने आसपास की अर्थव्यवस्था को समझने का अवसर मिलना चाहिए।

ग्राउंड-जीरो इंटर्नशिप... शिक्षा केवल कक्षा और पुस्तकालय तक सीमित नहीं रह सकती। विद्यार्थियों को गांवों, कस्बों, स्वयं सहायता समूहों, छोटे उद्योगों और स्थानीय बाजारों के बीच काम करने का अवसर मिलना चाहिए। इससे वे भारत की वास्तविक सामाजिक-आर्थिक संरचना को बेहतर ढंग से समझ सकेंगे।

अनुभव को भी ज्ञान मानना... विश्वविद्यालयों को केवल अकादमिक विशेषज्ञों तक सीमित नहीं रहना चाहिए। सफल किसान, उद्यमी, कारीगर, सामाजिक कार्यकर्ता और छोटे व्यवसाय संचालक भी छात्रों को ऐसे जीवन-पाठ दे सकते हैं जो किसी पाठ्यपुस्तक में उपलब्ध नहीं होते।

नवाचार को समाज से जोड़ना... शोध और नवाचार का लक्ष्य केवल शोधपत्र प्रकाशित करना नहीं होना चाहिए, बल्कि समाज की वास्तविक समस्याओं रोजगार, कृषि, जल, स्वास्थ्य और स्थानीय उद्योगों के समाधान खोजना भी होना चाहिए।

- चाय की टपरी, पोहे की रेहड़ी और विश्वविद्यालय की लाइब्रेरी के बीच की दूरी केवल भौतिक नहीं है। यह उस मानसिक और संरचनात्मक खाई का प्रतीक है जो शिक्षा और जीवन के अनुभवों के बीच मौजूद है।
- भारत को न तो अपने विश्वविद्यालयों की उपेक्षा करनी है और न ही अपने जुझारू हाशिए की। दोनों ही इस राष्ट्र की शक्ति हैं। आवश्यकता इस बात की है कि ज्ञान और अनुभव, सिद्धांत और व्यवहार, परिसर और समाज—इनके बीच संवाद स्थापित हो।
- जब विश्वविद्यालयों का ज्ञान और समाज का व्यावहारिक अनुभव एक-दूसरे के पूरक बनेंगे, तभी शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य पूरा होगा। तब डिग्रियां केवल कागज का प्रमाण नहीं रहेंगी, बल्कि जीवन, रोजगार और सामाजिक परिवर्तन का सशक्त माध्यम बन सकेंगी।

डॉ. शोभा भंडारी

गुलमोहर

ज्येष्ठ और आषाढ़ की तपती दुपहरी में भी,
जो गर्मजोशी के साथ सीना तान कर खड़ा है,
ऐसा सुर्ख चटख, लाल नारंगी दुशाला ओढ़े,
गुलमोहर का पेड़, उत्साह और हौसले की पहचान है,
जलती धूप में हर पथिक के लिए ठंडी छांव है,
मुश्किल घड़ियों में हिम्मत बनाये रखने का वरदान है।

विषमता में भी समरसता सिखाने वाला गान है,
ऊर्जा और उत्साह भरना इसका काम है,
ग़म की अंधेरी रात में सुबहा का संज्ञान है,
हर मायूसी और अंधेरे के बाद उजाले का पैगाम है।।

प्रकृति का हर संदेश एक सुंदर संप्रेषण है,
कदम-कदम पर मार्ग दिखाता इसका संश्लेषण है,
हर गुलमोहर निराशा को आशा में परिवर्तित करने का प्रण है,
एक सकारात्मक सोच का सदैव करता यह पोषण है।।।

मोको कहां ढूंढे रे बंदे...

खुशी कोई मंजिल नहीं, बल्कि जीने का तरीका है। जब मनुष्य बाहरी अपेक्षाओं से मुक्त होकर अपने भीतर झांकता है, तभी उसे संतोष, शांति और जीवन का वास्तविक उत्सव मिलता है।

डॉ. गौरव बिस्सा,
मैनेजमेंट ट्रेनर

लियो टॉलस्टॉय का प्रसिद्ध कथन है, "यदि मनुष्य पूर्णता ढूंढ रहा है तो यकीन मानिए कि वो कभी संतुष्ट नहीं हो सकता।" पूर्णता का अर्थ है सबकुछ खुद की सोच के अनुसार हो और उसमें किसी तरह की गलती न हो। ये असंभव है। "सब कुछ मेरे अनुसार हो जाए और जो हो अपने आप में सम्पूर्ण और परिपूर्ण हो", की चाहत में व्यक्ति नाखुश हो रहा है, उसमें कुंठा बढ़ रही है और धैर्य कम को रहा है। व्यक्ति के भीतर नकारात्मकता घर कर रही है। मनुष्य की इच्छाएं अनंत हैं और इन सबकी पूर्ति नामुमकिन है। मनुष्य मन की संतुष्टि और शान्ति को बाहर के भौतिक जगत में तलाशता फिर रहा है, जबकि असली खुशी और संतुष्टि तो भीतर छिपी हुई है।

तात्कालिक व वास्तविक खुशी

हार्वर्ड यूनिवर्सिटी द्वारा किए गए शोध के अनुसार, खुशी को तात्कालिक रूप से नहीं मापा जा सकता। जैसे नई गाड़ी या आपकी पसंदीदा नौकरी आपको कुछ पल की खुशी दे सकती है, क्योंकि ये तात्कालिक खुशियां हैं। शोध कहता है कि तात्कालिक खुशी अस्थायी और अल्प समय के लिए होती है। जैसे गाड़ी खरीदने पर आज आप खुश होंगे, लेकिन चार दिन उन भावनाओं में कमी आएगी। इसके विपरीत स्थायी खुशी अंतर्मन की होती है और इसके लिए ज़रूरी है योजनाबद्ध जीवन शैली, कार्यस्थल पर साम्य, नकारात्मकता का त्याग, 'लोग क्या कहेंगे' की सोच से मुक्ति तथा धन को ही सर्वोपरि न मानने के भाव का विकास।

कृत्रिम खुशी

व्यक्ति कृत्रिम सुख या बाहरी खुशी की प्राप्ति के स्वप्न को जी रहा है। कृत्रिम खुशी क्षणिक है। कृत्रिम खुशी बाहरी संसाधनों जैसे टीवी, मोबाइल, सोशल मीडिया के लाइक्स, महंगे ब्रांडेड कपड़े, गाड़ियां, पर्यटन यात्राओं आदि से प्राप्त होती हैं। ये कुछ क्षणों तक सुख देती हैं। वास्तविक खुशी आंतरिक है जो संयम, सेवा, करुणा और संतोष से जन्म लेती हैं। ये बाहरी परिस्थितियों पर निर्भर नहीं होतीं।

देने के भाव में छिपा है सुख

शोध अध्ययनों के अनुसार, दूसरों की प्रसन्नता में प्रसन्न होना और दूसरों के दुःख में दुखी होना ही जीवन है। विस्कौन्सिक विश्वविद्यालय द्वारा करवाए गए शोध के अनुसार, जब व्यक्ति दूसरों को प्रसन्न करने या कुछ देने के भाव से काम करता है तो उसके मस्तिष्क में गामा तरंगें उत्पन्न होती हैं। ये गामा तरंगें नया सीखने, ध्यान करने और स्मृतियों से जुड़ी हैं। ये तरंगें जितनी उच्च होंगी, व्यक्ति उतना ही खुश होगा।

सबसे प्रसन्न व्यक्ति की सोच

विश्वविद्यालय ने यह प्रयोग प्रसिद्ध लेखक और बौद्ध भिक्षु मैथ्यू रिकॉर्ड पर किया। मैथ्यू को संसार का सबसे प्रसन्न व्यक्ति होने का खिताब दिया गया है और उनके अनुसार, वे इसलिए प्रसन्न हैं क्योंकि वे दूसरों के प्रति मानवीय और संवेदनशील रवैया रखते हैं। इससे यह बात साफ़ है कि व्यक्ति में जितनी करुणा, प्रेम और सहानुभूति होगी, वो उतना ही प्रसन्न होगा।

क्या कहता है शास्त्र?

सूक्ष्म और स्थूल: भारतीय शास्त्रों में प्रेम, दया, करुणा, भक्ति, समर्पण, ईमानदारी आदि गुणों को माइक्रो या सूक्ष्म एलिमेंट्स कहा गया है, जबकि जमीन, पैसा, जायदाद, पद आदि को मैक्रो या स्थूल एलिमेंट्स। भारतीय शास्त्र समझाते हैं कि स्थूल और सूक्ष्म; दोनों तत्त्व व्यक्ति में होने चाहिए, लेकिन अधिक महत्त्व सूक्ष्म गुणों का है, क्योंकि ये तत्त्व कंप्यूटर के सॉफ्टवेयर के जैसे हैं, जबकि मैक्रो या स्थूल गुण हार्डवेयर या बाहरी मशीन जैसे। कंप्यूटर बाहर से जैसा भी दिखे, अन्दर से मज़बूत हो। यही बात जीवन में भी लागू होती है। आंतरिक गुणों को मज़बूत बनाने से प्रसन्नता बढ़ती है।

गीता: भगवद्गीता के अनुसार, जो व्यक्ति बाह्य भोग-विलास में आसक्त नहीं होता और जिसका चित्त स्थिर रहता है, वह शाश्वत सुख को प्राप्त करता है। इससे स्पष्ट है कि चिर स्थायी खुशी अनासक्त रहने में, बाहरी भोग विलास के कुचक्र को त्यागने में और अपने मन को स्थिर रखने में है। अच्छी या बुरी- जो भी परिस्थिति हो, उसे स्वीकारते हुए या उसे ईश्वरीय कृत्य मानते हुए अपना कार्य करते रहना व्यक्ति में खुशी का संचार करता है।

उपनिषद : कठोपनिषद कहता है कि त्याग से शांति प्राप्त होती है और यही सच्चा सुख है। इससे स्पष्ट है कि बाहरी संसाधनों, सम्पत्ति, मिल्कियत आदि से बंधन ही दुःख का मूल है। अतः अनासक्त भाव रखें। "मेरा कुछ नहीं है" का भाव रखना ही खुशी प्राप्ति का पहला सूत्र है।

ह्यूगे और इकिगाई

ह्यूगे : डेनमार्क में खुश रहने की "ह्यूगे शैली" अपनाई जाती है। ह्यूगे का अर्थ है- छोटे-छोटे पलों में खुशी ढूंढना। बड़ी घटनाओं और खुशियों के बजाय इस पल की खुशी का आनंद लेना ही ह्यूगे है। भारत तो इस तकनीक को सहस्रों वर्षों से जी रहा है। आपने मंदिरों में उद्घोष सुना होगा- "आज के आनंद की जय"। ये ह्यूगे शैली ही तो है। इस शैली में परिवारजन सुखपूर्वक साथ में अध्ययन करते हैं, चाय कॉफ़ी पीते हैं या संगीत सुनते हैं। वे खुश होने के लिए किसी मेगा इवेंट का इंतज़ार नहीं करते।

इकिगाई : इसी तरह जापान में इकिगाई संस्कृति है। इकिगाई का अर्थ है जीने के कारण की खोज। ये जीने की प्रेरणा देता है। इकिगाई के चार सूत्र हैं। आपको किससे प्रेम है? आप किस चीज़ में कुशल हैं? आपकी क्या आवश्यकता है? आप किस चीज़ से आजीविका कमा सकते हैं? इन चार प्रश्नों का उत्तर शान्ति से दीजिए। आपको जीवन का उद्देश्य मिल जाएगा। आपको खुशी मिलेगी। अतः बाहरी के बजाय अंतर्मन में खुशी तलाशें। यही जीने का तरीका है।

ओटीटी के दौर में बड़े पर्दे का भविष्य

सुधांशु टाक,
लेखक एवं समीक्षक

ओटीटी प्लेटफॉर्म ने मनोरंजन के तौर-तरीके बदल दिए हैं, लेकिन बड़े पर्दे का आकर्षण अब भी बरकरार है। बदलती तकनीक और दर्शकों की पसंद के बीच भविष्य प्रतिस्पर्धा का नहीं, बल्कि दोनों माध्यमों के संतुलित सह-अस्तित्व का संकेत दे रहा है।

कहानी कहने का तरीका बदला... ओटीटी ने फिल्म और धारावाहिक निर्माण की पारंपरिक सीमाएं भी तोड़ दी हैं। अब वेब श्रृंखलाओं के माध्यम से पात्रों और कथानक को विस्तार मिल रहा है। छोटे शहरों, गांवों और नए सामाजिक विषयों पर आधारित कहानियां भी दर्शकों तक पहुंच रही हैं, जिससे नए लेखकों, निर्देशकों और कलाकारों के लिए अवसर बढ़े हैं।

किसी भी नई फिल्म का अर्थ सिनेमाघरों के बाहर लगी लंबी कतारें और बड़े पर्दे का रोमांच होता था। आज वही दर्शक मोबाइल, स्मार्ट टीवी या लैपटॉप पर अपनी सुविधा के अनुसार दुनिया भर का मनोरंजन देख रहा है। तकनीक ने केवल फिल्म देखने का माध्यम नहीं बदला, बल्कि दर्शकों की आदतों और फिल्म उद्योग की कार्यशैली को भी बदल दिया है।

भारत में मनोरंजन का स्वरूप समय के साथ लगातार बदलता रहा है। लोकनाट्य और थिएटर से शुरू हुआ यह सफर सिनेमा, दूरदर्शन, निजी चैनलों और मल्टीप्लेक्स तक पहुंचा। इसके बाद स्मार्टफोन और सस्ते इंटरनेट ने मनोरंजन को दर्शकों की हथेली तक पहुंचा दिया और ओटीटी इस बदलाव का सबसे प्रभावशाली माध्यम बनकर उभरा।

यह कहना उचित नहीं होगा कि ओटीटी का जन्म कोरोना महामारी के दौरान हुआ। भारत में डिजिटल मंच पहले से मौजूद थे, लेकिन महामारी के दौरान जब सिनेमाघर महीनों तक बंद रहे, तब दर्शकों और फिल्म उद्योग दोनों ने इसकी वास्तविक क्षमता को पहचाना। अनेक फिल्मों ने सीधे डिजिटल मंचों का रुख किया और इसके बाद ओटीटी मनोरंजन का स्थायी हिस्सा बन गया।

आज अनेक ओटीटी मंच हिंदी, अंग्रेजी, दक्षिण भारतीय और क्षेत्रीय भाषाओं के साथ दुनिया भर का विविध कंटेंट उपलब्ध करा रहे हैं। कोरियाई और अन्य विदेशी श्रृंखलाओं के साथ भारत की 'पंचायत' जैसी वेब श्रृंखलाएं भी वैश्विक पहचान बना चुकी हैं। इससे स्पष्ट है कि अच्छी कहानी की अब कोई भौगोलिक सीमा नहीं रह गई है।

क्या कम हो रहा है सिनेमाघरों का आकर्षण?

- यह प्रश्न पिछले कुछ वर्षों से लगातार पूछा जा रहा है। ओटीटी के विस्तार का असर विशेषकर मध्यम और कम बजट की फिल्मों की टिकट बिक्री पर पड़ा है। कई निर्माता ऐसी फिल्मों को सीधे डिजिटल मंचों पर प्रदर्शित करना बेहतर विकल्प मान रहे हैं।
- इसके बावजूद यह कहना जल्दबाजी होगी कि सिनेमाघरों का महत्व समाप्त हो रहा है। बड़े बजट, भव्य दृश्य प्रभावों और उत्कृष्ट ध्वनि वाले अनुभव का आकर्षण आज भी बड़े पर्दे पर ही महसूस होता है। परिवार और मित्रों के साथ फिल्म देखने का सामूहिक आनंद डिजिटल माध्यम पूरी तरह नहीं दे सकता। हाल के वर्षों की अनेक सफल फिल्मों ने साबित किया है कि मजबूत कहानी और प्रभावशाली प्रस्तुति आज भी दर्शकों को सिनेमाघरों तक खींच लाती है।

बदल रहा है फिल्म उद्योग का कारोबार

- फिल्म उद्योग भी बदलती परिस्थितियों के अनुसार अपनी रणनीति बना रहा है। अधिकांश बड़ी फिल्मों की योजना पहले सिनेमाघरों और उसके कुछ सप्ताह बाद ओटीटी पर प्रदर्शन की होती है। इससे निर्माताओं को बॉक्स ऑफिस के साथ डिजिटल अधिकारों से भी आय मिलती है।
- दूसरी ओर ओटीटी ने क्षेत्रीय सिनेमा और स्थानीय कहानियों को वैश्विक मंच दिया है। पहले जिन फिल्मों की पहुंच सीमित थी, वे अब देश-विदेश के दर्शकों तक आसानी से पहुंच रही हैं।

चुनौतियां भी कम नहीं

ओटीटी के विस्तार के साथ कंटेंट की गुणवत्ता, अश्लीलता, हिंसा और बढ़ती सदस्यता लागत जैसे प्रश्न भी सामने आए हैं। वहीं सिनेमाघरों को बढ़ती टिकट दरों और घर बैठे उपलब्ध मनोरंजन के बीच दर्शकों को बेहतर अनुभव देने की चुनौती का सामना करना पड़ रहा है।

भविष्य संतुलन का है

- मनोरंजन उद्योग जिस दिशा में आगे बढ़ रहा है, उसे देखते हुए भविष्य ओटीटी और सिनेमाघरों की प्रतिस्पर्धा का नहीं, बल्कि दोनों के सह-अस्तित्व का दिखाई देता है। ओटीटी ने दर्शकों को सुविधा, विविधता और नए विषय दिए हैं, जबकि सिनेमाघर आज भी भव्यता और सामूहिक अनुभव का पर्याय बने हुए हैं।
- आने वाले समय में वही निर्माता और निर्देशक सबसे अधिक सफल होंगे जो यह समझेंगे कि किस प्रकार की कहानी बड़े पर्दे के लिए उपयुक्त है और कौन-सा विषय डिजिटल मंच पर अधिक प्रभाव छोड़ सकता है। अंततः जीत किसी एक माध्यम की नहीं, बल्कि अच्छी कहानी, उत्कृष्ट प्रस्तुति और दर्शकों के विश्वास की होगी।

अमेरिका, कनाडा और मेक्सिको की मेजबानी में खेले जा रहे विश्व कप 2026 के शुरुआती मुकाबलों ने कई स्थापित धारणाएं तोड़ी हैं। छोटी टीमें बड़ी ताकतों को चुनौती दे रही हैं जबकि मैसी और रोनाल्डो जैसे दिग्गज अपने करियर के अंतिम विश्व कप में भी सुर्खियों के केंद्र में हैं।

विश्व फुटबॉल का बदलता चेहरा

अजय अस्थाना,
वरिष्ठ पत्रकार

विश्व फुटबॉल में लंबे समय तक एक अलिखित व्यवस्था रही। माना जाता था कि विश्व कप की असली लड़ाई ब्राजील, अर्जेंटीना, जर्मनी, फ्रांस, स्पेन और इटली जैसे देशों के बीच ही होगी। बाकी टीमें प्रतियोगिता का हिस्सा तो बन सकती थीं लेकिन इतिहास लिखने का अधिकार केवल दिग्गजों के पास था। विश्व कप 2026 ने इस धारणा को शुरुआती दौर में ही चुनौती दे दी है।

इस बार सबसे बड़ा झटका तब लगा जब विश्व कप में पहली बार उतरी केप वर्डे की टीम ने यूरोपीय चैंपियन स्पेन को गोलरहित बराबरी पर रोक दिया। स्पेन ने पूरे मैच में दबदबा बनाए रखा, अधिक आक्रमण किए और गेंद पर नियंत्रण भी रखा, लेकिन केप वर्डे का अनुशासन और आत्मविश्वास उसके सामने दीवार बन गया। यह परिणाम केवल एक ड्रॉ नहीं था, बल्कि विश्व फुटबॉल में बदलते संतुलन का प्रतीक था।

इसी तरह बेल्जियम को मिस्र ने बराबरी पर रोका। ब्राजील जैसी पांच बार की विश्व चैंपियन टीम मोरक्को के खिलाफ जीत दर्ज नहीं कर सकी। पुर्तगाल को डीआर कांगो ने 1-1 की बराबरी पर रोककर विश्व कप का एक और बड़ा उलटफेर किया। ईरान और न्यूजीलैंड का मुकाबला भी बराबरी पर समाप्त हुआ।

इन परिणामों को केवल संयोग मानना भूल होगी। वास्तव में यह फुटबॉल के लोकतंत्रीकरण की प्रक्रिया है। आज अफ्रीका, एशिया और मध्य पूर्व के खिलाड़ी यूरोप की बड़ी लीगों में खेल रहे हैं। उन्हें वही प्रशिक्षण, वही खेल विज्ञान और वही तकनीकी सुविधाएं उपलब्ध हैं जो कभी केवल चुनिंदा देशों तक सीमित थीं।

डेटा विश्लेषण और आधुनिक रणनीति ने भी अंतर कम किया है। अब छोटी टीमें केवल रक्षात्मक फुटबॉल नहीं खेलतीं, बल्कि विरोधी की कमजोरियों का अध्ययन करके योजनाबद्ध तरीके से मैदान में उतरती हैं। मोरक्को ने 2022 में सेमीफाइनल तक पहुंचकर जो संदेश दिया था वह अब कई अन्य देशों में भी दिखाई दे रहा है।

विश्व कप 2026 के शुरुआती मुकाबले बता रहे हैं कि अब इतिहास और प्रतिष्ठा से मैच नहीं जीते जाते। फुटबॉल का सबसे सुंदर पक्ष यही है कि यहां नब्बे मिनट के भीतर कोई भी टीम किसी भी टीम को चुनौती दे सकती है। यही कारण है कि आज यह खेल पहले से अधिक रोमांचक और अनिश्चित दिखाई देता है।

मैसी और रोनाल्डो : एक युग का स्वर्णिम अध्याय

जब विश्व फुटबॉल में नई ताकतें उभर रही हैं और नई पीढ़ी के खिलाड़ी सुर्खियां बटोर रहे हैं, तब भी दो नाम ऐसे हैं जिनकी चमक फीकी नहीं पड़ी है- लियोनेल मैसी और क्रिस्टियानो रोनाल्डो। पिछले दो दशकों में इन दोनों खिलाड़ियों ने न केवल रिकॉर्ड बनाए, बल्कि फुटबॉल की लोकप्रियता को भी अपूर्व ऊंचाइयों तक पहुंचाया। विश्व कप 2026 में भी दोनों महानायक चर्चा के केंद्र में हैं।

मैसी : उम्र बढ़ी, जादू बरकरार

अर्जेंटीना के पहले मुकाबले में अल्जीरिया के खिलाफ 38 वर्षीय मैसी ने अपने विश्व कप करियर की पहली हैट्रिक लगाकर इतिहास रच दिया। इसके साथ ही वे विश्व कप इतिहास में हैट्रिक बनाने वाले सबसे उम्रदराज़ खिलाड़ी बन गए। इस शानदार प्रदर्शन ने उन्हें विश्व कप में सर्वाधिक गोल करने वाले खिलाड़ियों की सूची में शीर्ष स्थान की बराबरी तक पहुंचा दिया। यह उपलब्धि और भी विशेष इसलिए है, क्योंकि मैसी अपने रिकॉर्ड छठे विश्व कप में खेल रहे हैं। लगभग बीस वर्ष पहले विश्व कप में पदार्पण करने वाले खिलाड़ी का आज भी रिकॉर्ड बुक में शीर्ष पर बने रहना उनकी असाधारण प्रतिभा और निरंतरता का प्रमाण है।

रोनाल्डो : जुनून की कोई उम्र नहीं

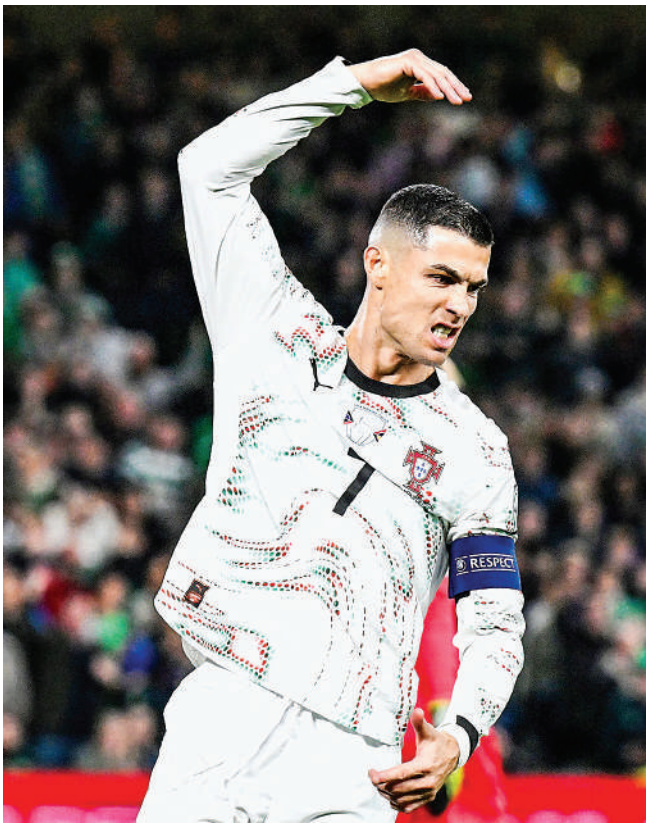

क्रिस्टियानो रोनाल्डो की कहानी भी किसी प्रेरणा से कम नहीं है। 41 वर्ष की उम्र में वे विश्व कप के मैदान पर उतरने वाले सबसे उम्रदराज़ आउटफील्ड खिलाड़ियों में शामिल हो चुके हैं। यह उनका भी रिकॉर्ड छठा विश्व कप है। विश्व कप से पहले ही वे पुरुष फुटबॉल इतिहास में 900 आधिकारिक करियर गोल का आंकड़ा पार करने वाले पहले खिलाड़ी बन चुके थे और अब 1000 गोल के ऐतिहासिक पड़ाव की ओर बढ़ रहे हैं। उनकी फिटनेस, अनुशासन और जीत की भूख आज भी युवा खिलाड़ियों के लिए उदाहरण बनी हुई है।

विरासत जो पीढ़ियों तक जीवित रहेगी

- मैसी और रोनाल्डो की सबसे बड़ी उपलब्धि केवल ट्रॉफियां, गोल या व्यक्तिगत पुरस्कार नहीं हैं। इन दोनों ने पूरी एक पीढ़ी को फुटबॉल से प्रेम करना सिखाया है। करोड़ों बच्चों ने मैदान पर उतरते समय कभी मैसी बनने का सपना देखा तो कभी रोनाल्डो बनने का। उनकी प्रतिस्पर्धा ने खेल को नई ऊंचाइयों तक पहुंचाया और फुटबॉल को वैश्विक संस्कृति का हिस्सा बना दिया।
- विश्व कप 2026 में जहां एक ओर नई टीमें और नए सितारे भविष्य की पटकथा लिख रहे हैं, वहीं मैसी और रोनाल्डो दुनिया को यह याद दिला रहे हैं कि महानता केवल रिकॉर्डों में नहीं बल्कि उस प्रेरणा में बसती है जो पीढ़ियों तक लोगों के दिलों में जीवित रहती है।
- विश्व कप 2026 हमें यह सिखा रहा है कि फुटबॉल में बदलाव ही स्थायी है। नए सितारे उगते रहेंगे, नई टीमें आगे बढ़ती रहेंगी, लेकिन कुछ नाम इतिहास के आकाश में हमेशा चमकते रहेंगे।

दो सौ वर्ष की हिंदी पत्रकारिता

नॉन स्ट्राइकर एंड पर साहित्य

दिनेश सिंदल,
कवि, लेखक

आज से दो सौ वर्ष पहले कम्प्यूटर नहीं थे, ऑफसेट मशीनें भी नहीं थीं। लोहे व लकड़ी से बनी हाथ से चलने वाली प्रेस थी। तब सीसे से बनी स्याही को हाथों से रोलर के जरिए सांचों पर लगाया जाता था। उसके बाद हाथ की मशीन द्वारा कागज पर प्रिंट किया जाता था। ऐसे निकला था हिंदी का पहला अखबार उदंत मार्तंड।

आज हिंदी पत्रकारिता के 200 वर्ष पूर्ण हो चुके हैं। इस लंबी यात्रा में उसने अनेक उतार-चढ़ाव देखे। पत्रकारों और साहित्यकारों ने उसे गरिमा प्रदान की तथा लोकतंत्र में उसकी महत्वपूर्ण भूमिका स्थापित की। जहां पत्रकारों ने समाज के सच को जन-जन तक पहुंचाने का काम किया, वहीं साहित्यकारों ने उसे संवेदनशील बनाया। भारतेंदु हरिश्चंद्र, महावीर प्रसाद द्विवेदी, गणेश शंकर विद्यार्थी, प्रेमचंद, माखनलाल चतुर्वेदी, अज्ञेय आदि ने इस धारा को सतत प्रवाहित रखा।

अकबर इलाहाबादी साहब का एक शेर है कि-
खींचों न कमानों को, न तलवार निकालो
जब तोप मुकाबिल हो तो अखबार निकालो..

यह है छपे हुए शब्द की ताकत। तोप से नहीं, कई बार अखबार से क्रांति जन्म लेती है। अखबार समाज सुधार का काम तो करता ही है। समाज की विद्रूपताओं, विसंगतियों को भी जनता के सामने रखता है। वह जनमत निर्माण का काम भी करता है। इसीलिए इसे लोकतंत्र का चौथा स्तंभ कहा गया है।

अखबार जनता के सवालों को उठाता है। वह जनता की आवाज हुआ करता है। किसी ने कहा है कि-

फिर मेरे सर पे कड़ी धूप की बौछार गिरी
मैं जहां जा के छुपा था वही दीवार गिरी
लोग किस्तों में मुझे कत्ल करेंगे शायद
सबसे पहले मेरी आवाज पे तलवार गिरी..

पत्रकारिता भाषा, समाज, संस्कृति और राष्ट्रीय चेतना को दिशा देती है। और साहित्य समाचार को संवेदनशील, विचारशील बनाता है और अभिव्यक्ति की शक्ति देता है। समाचार तात्कालिक घटना पर होता है लेकिन साहित्य उसे सर्वकालिक, कालजयी बना देता है।

आज क्रांति धर्मा पत्रकारिता के गले में बाजार का शिकंजा कसता जा रहा है। आज बाजार जीवन के लगभग हर क्षेत्र को संचालित कर रहा है। आज मीडिया का बड़ा हिस्सा और साहित्य की कुछ धाराएं भी बाजार के दबावों से अछूती नहीं रह गई हैं। कभी पत्रकारिता का उद्देश्य जनता के सामने सच लाना होता था। आज पत्रकारिता पर व्यावसायिक दबाव पहले से कहीं अधिक हावी दिखाई देते हैं। खबरें गौण हो गई हैं। मुखपृष्ठ पर विज्ञापन! साहित्य तो हाशिए और कॉलम का आइटम बन गया है। अखबारों से साहित्य परिशिष्ट गायब हो गए हैं।

साहित्य विभाजनों की दीवारें गिराकर मनुष्य को मनुष्य की तरह देखने का आग्रह करता है। यह स्थिति बाजार और राजनीति के लिए अनुकूल नहीं होती। क्योंकि राजनीति का हित इसी में है कि मनुष्य बंटा रहे। बाजार चाहेगा कि मनुष्य बंटा हुआ रहे। इसी में उसका लाभ है।

साहित्य और राजनीति में छत्तीस का आंकड़ा है। यहां मैं पत्रकारिता को भी साहित्य में शामिल मानता हूं। साहित्यकार कहता है एकला चलो रे। वह अकेले की यात्रा है। लेकिन राजनेता को भीड़ चाहिए। वह तभी बड़ा नेता होता है जब उसके पीछे भीड़ बड़ी होती है। राष्ट्रपति दिल्ली में बैठा है तो उसके पीछे 140 करोड़ की भीड़। एक सौ चालीस करोड़ का वह राष्ट्रपति। उसे अगर आप जंगल में छोड़ आए, वहां वह किसका राष्ट्रपति? लेकिन एक कवि को अगर आप जंगल में छोड़ आए तो वह पक्षियों को भी अपने गीत सुना देगा।

जब बाजार ने बदली पत्रकारिता की प्राथमिकताएं

हमारी पत्रकारिता, हमारा साहित्य आज बाजारोन्मुख हो गया। मेरे घर में प्रतिदिन एक चौबीस पेज का अखबार तीन रुपए पचास पैसे में कोई डाल जाता है। अगर मैं उसे कहूं की इन चौबीस पन्नों पर तुम प्रिंटिंग का खर्चा करते हो, बिजली का खर्च, बड़ी-बड़ी मशीनों की ईएमआई, फिर इसमें लिखने वालों को भी कुछ न कुछ देते ही होंगे? तुम कुछ मत करो ये 24 पन्ने मुझे रोज कोरे दे जाया करो। क्या वह मुझे दे पाएगा? नहीं, क्योंकि कोरे चौबीस पन्नों की लागत ही कई गुना अधिक बैठती होगी। फिर वह उन कोरे पन्नों पर इतना खर्च करने के बाद भी मुझे तीन रुपए पचास पैसे में कैसे दे रहा है? कैसे पूरा करता है वह अपना ये घाटा? कहां से आता है यह पैसा? यह पैसा आता है विज्ञापन से। अब आप ही सोचिए कि अखबार का मालिक अपने पाठक की चिंता करेगा या अपने विज्ञापनदाता की।

पहले छपे हुए शब्द पर लोगों को भरोसा था। अखबार को लोग किसी घटना के प्रमाण की तरह काम में लेते थे।

आज सबके अपने-अपने अखबार हैं। सबके अपने-अपने टीवी चैनल हैं। लेकिन इतने सारे अखबारों व टीवी चैनलों के बीच में भी आम आदमी की खबर कोई नहीं दे पा रहा।

कोई नहीं जो पता दे दिलों की हालत का
कि सारे शहर के अखबार है खबर के बगैर
- सलीम अहमद

अंत में एक बात- एक पत्रकार साइकिल पर करियर लगवाने रिपेयरिंग वाले के पास गया। मिस्त्री ने दो घंटे बाद आने को कहा। पत्रकार जब दो घंटे बाद पहुंचा तो देखा साइकिल में करियर तो लग गया, लेकिन स्टैंड गायब था। उसने मिस्त्री से कहा- तुमने करियर तो लगा दिया, लेकिन क्यों स्टैंड हटा दिया। इस पर उस साइकिल वाले का जवाब था मित्रों, उसने कहा- पत्रकार महोदय अगर आप करियर चाहते हैं तो फिर स्टैंड नहीं ले सकते। और अगर आप स्टैंड लेते हैं तो फिर करियर की चिंता मत करिए। शायद यही दुविधा आज की पत्रकारिता के सामने भी खड़ी है।

विपुल डोभाल, ज्योतिष, पीठाधीश्वर।
श्री शनिधाम आश्रम, विकासनगर देहरादून
ईमेल : vipravaani@gmail.com
मोबाइल : 9928424374

जुलाई 2026 में कुछ ग्रहों का राशि परिवर्तन जीवन के कई आयामों में बदलाव लाएगा। गुरु का उच्च राशि में प्रवेश और बुध तथा शनि का वक्री स्वभाव मिला-जुला असर देंगे। ज्योतिषीय दृष्टि से जुलाई 2026 का मूल संदेश है- धैर्य, योजनाबद्ध कार्य और परिवार के साथ सामंजस्य। जो लोग जल्दबाज़ी से बचेंगे और दीर्घकालिक सोच अपनाएंगे, वे इस महीने का अधिक लाभ उठा सकेंगे

मेष

जुलाई 2026 मेष राशि वालों के लिए घर-परिवार, संपत्ति और व्यक्तिगत जीवन पर ध्यान केंद्रित करने का समय रहेगा। परिवारिक संबंधों में मधुरता। घर में कोई शुभ कार्य संभव है। नौकरीपेशा लोगों को नई जिम्मेदारी मिल सकती हैं, जबकि व्यापारियों को पुराने निवेशों से लाभ के संकेत हैं। आर्थिक स्थिति बेहतर, लेकिन खर्च बढ़ सकता है। प्रेम संबंधों में स्पष्टता आएगी व अविवाहितों को नए प्रस्ताव मिल सकते हैं। तनाव और क्रोध पर नियंत्रण रखना आवश्यक होगा।

वृषभ

वृषभ राशि वालों के लिए यह महीना परिश्रम और सकारात्मक परिणामों का संकेत देता है। आत्मविश्वास में वृद्धि व संचार कौशल के कारण कार्यक्षेत्र में प्रशंसा मिलेगी। व्यापार में नए संपर्क लाभदायक हो सकते हैं। धन आगमन के नए अवसर बनेंगे, हालांकि अनावश्यक खर्चों से बचना उचित रहेगा। परिवार में भाई-बहनों का सहयोग मिलेगा। प्रेम जीवन में स्थिरता रहेगी और दांपत्य जीवन में आपसी समझ बढ़ेगी। छोटी यात्राएं लाभदायक सिद्ध हो सकती हैं।

मिथुन

मिथुन राशि वालों के लिए जुलाई आर्थिक प्रगति का महीना सिद्ध हो सकता है। लंबे समय से रुके हुए कार्य पूरे होने लगेंगे और आर्थिक मामलों में राहत मिलेगी। नौकरी में पदोन्नति या नई जिम्मेदारी मिल सकती है। व्यापार में विस्तार की योजनाएं सफल हो सकती हैं। परिवार का सहयोग बना रहेगा और सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ेगी। प्रेम संबंधों में विश्वास और निकटता बढ़ेगी। स्वास्थ्य सामान्य रहेगा, लेकिन अत्यधिक व्यस्तता के कारण थकान महसूस हो सकती है।

कर्क

कर्क राशि वालों के लिए यह महीना शुभ माना जा सकता है। आत्मविश्वास, उत्साह और सकारात्मक सोच बढ़ेगी। करियर में नए अवसर मिलेंगे व अधिकारियों का सहयोग मिलेगा। आय के नए स्रोत विकसित हो सकते हैं। परिवार में सुख-शांति बनी रहेगी और किसी शुभ समाचार की प्राप्ति हो सकती है। प्रेम और वैवाहिक जीवन में मधुरता बढ़ेगी। स्वास्थ्य की दृष्टि से ऊर्जा और उत्साह भरपूर रहेगा, जिससे नए कार्यों में सफलता प्राप्त होगी।

सिंह

सिंह राशि वालों के लिए जुलाई आत्ममंथन और भविष्य की योजनाएं बनाने का समय रहेगा। कार्यक्षेत्र में आपके प्रयासों से भविष्य के लिए मजबूत आधार तैयार होगा। आर्थिक मामलों में सावधानी बरतना आवश्यक है, क्योंकि खर्च बढ़ सकते हैं। विदेश, शोध या आध्यात्मिक विषयों में रुचि बढ़ सकती है। प्रेम संबंधों में भावनात्मक संतुलन बनाए रखना आवश्यक होगा। स्वास्थ्य की दृष्टि से पर्याप्त आराम और नियमित दिनचर्या अपनाना लाभदायक रहेगा।

कन्या

कन्या राशि वालों के लिए जुलाई उपलब्धियों और नए अवसरों का महीना रहेगा। मित्रों, सहयोगियों और सामाजिक संपर्कों से लाभ प्राप्त हो सकता है। करियर में लंबे समय से किए गए प्रयासों का सकारात्मक परिणाम मिलेंगे। आर्थिक दृष्टि से आय में वृद्धि और नए लाभ के अवसर बनेंगे। प्रेम जीवन में सकारात्मक परिवर्तन संभव है और अविवाहित लोगों के लिए नए संबंधों के योग बन सकते हैं। स्वास्थ्य अच्छा रहेगा और मानसिक प्रसन्नता बनी रहेगी।

तुला

तुला राशि वालों के लिए करियर और सामाजिक प्रतिष्ठा के क्षेत्र में उन्नति के संकेत हैं। पदोन्नति, नई जिम्मेदारी या सम्मान प्राप्त हो सकता है। व्यापार में विस्तार के अवसर मिलेंगे और आर्थिक स्थिति मजबूत होगी। परिवार में सहयोग बना रहेगा। प्रेम जीवन में कुछ महत्वपूर्ण निर्णय लिए जा सकते हैं। स्वास्थ्य सामान्य रहेगा, लेकिन आराम के लिए समय निकालना होगा। यह महीना आपकी सार्वजनिक छवि को मजबूत करने वाला साबित हो सकता है।

वृश्चिक

वृश्चिक राशि वालों के लिए भाग्य का सहयोग प्राप्त होने वाला महीना है। शिक्षा, प्रतियोगिता, शोध और विदेश संबंधी कार्यों में सफलता मिल सकती है। करियर में नए अवसर प्राप्त होंगे और वरिष्ठ व्यक्तियों का मार्गदर्शन लाभकारी रहेगा। आर्थिक स्थिति में सुधार होगा और निवेश से लाभ मिल सकता है। धार्मिक और आध्यात्मिक गतिविधियों में रुचि बढ़ेगी। प्रेम जीवन में सकारात्मकता बनी रहेगी और वैवाहिक जीवन में सामंजस्य बढ़ेगा।

धनु

धनु राशि वालों के लिए जुलाई परिवर्तन और सावधानी का संकेत देता है। आर्थिक मामलों में सोच-समझकर निर्णय लेना ठीक होगा। बड़े निवेश या जोखिम भरे निर्णयों को टालना बेहतर रहेगा। नौकरी और व्यापार में कुछ चुनौतियां आ सकती हैं, लेकिन धैर्य रखने से समाधान मिल जाएगा। परिवार का सहयोग मिलेगा, हालांकि कुछ भावनात्मक उतार-चढ़ाव संभव हैं। स्वास्थ्य के मामले में वाहन चलाते समय और यात्रा के दौरान विशेष सावधानी बरतनी चाहिए।

मकर

मकर राशि वालों के लिए साझेदारी और संबंधों का महत्व बढ़ेगा। व्यापारिक साझेदारियों से लाभ मिल सकता है और वैवाहिक जीवन में सकारात्मक परिवर्तन दिखाई देंगे। नौकरीपेशा लोगों को सहयोगियों का समर्थन मिलेगा। आर्थिक स्थिति में धीरे-धीरे सुधार होगा और भविष्य की योजनाओं के लिए मजबूत आधार तैयार होगा। प्रेम जीवन में विश्वास और समझ बढ़ेगी। स्वास्थ्य सामान्य रहेगा, लेकिन अत्यधिक कार्यभार से बचना आवश्यक होगा।

कुंभ

कुम्भ राशि वालों के लिए कार्यक्षेत्र में व्यस्तता बढ़ने वाली है। नौकरी और व्यवसाय दोनों में जिम्मेदारियां बढ़ेंगी, लेकिन परिश्रम का उचित फल भी प्राप्त होगा। आर्थिक स्थिति स्थिर बनी रहेगी। परिवार में कुछ छोटी-मोटी बातों को लेकर मतभेद हो सकते हैं, जिन्हें समझदारी से सुलझाना होगा। प्रेम जीवन में धैर्य और संवाद की आवश्यकता रहेगी। स्वास्थ्य के मामले में खान-पान और दिनचर्या पर विशेष ध्यान देना लाभदायक रहेगा।

मीन

मीन राशि वालों के लिए जुलाई रचनात्मकता, आनंद और उपलब्धियों का महीना सिद्ध हो सकता है। कला, साहित्य, शिक्षा और रचनात्मक क्षेत्रों से जुड़े लोगों को विशेष सफलता मिलने के संकेत हैं। आर्थिक दृष्टि से लाभ के नए अवसर प्राप्त होंगे। प्रेम जीवन में रोमांस और भावनात्मक निकटता बढ़ेगी। परिवार में खुशियों का वातावरण बना रहेगा और संतान पक्ष से शुभ समाचार मिल सकता है। स्वास्थ्य अच्छा रहेगा और मानसिक संतोष की अनुभूति होगी।

CELEBRATING 42 YEARS OF TRUST
THE LIQUID GOLD

ISO 22000 2018

स्वाद वो जो बना दे बात

मनभाती महक, लाजवाब स्वाद, भरपूर पौष्टिकता

सोना सिक्का®©

BEST CHOICE REFINED GROUNDNUT OIL

शुद्धता से समझौता नहीं

SONA SIKKA

महंगा है पर खरा है!

स्वाद और सेहत से भरा है

42 वर्षों से शुद्धता के हर मापदंड पर खरा उतरा है, इसलिए बेस्ट है सोना सिक्का

सोना सिक्का रखता है ख्याल आपकी सेहत का आपके परिवार की खुशियों का इसलिए सोना सिक्का तेल के निर्माण में गुणवत्ता शुद्धता और सेहत से कोई समझौता नहीं किया जाता है।

परिवार की सेहत के लिए सोना सिक्का में व्यंजन बनायें, खुद खायें, सबकों खिलायें....!

मिलते-जुलते नाम और अशुद्ध ब्रांड से सावधान. आपके स्वास्थ्य से बढ़कर कुछ नहीं

SHAKUN

Shyam and Shyam Oils Pvt. Ltd. Jodhpur

Plot No. B 5,6,7 (A), 1st Phase, Basni Industrial Area, Jodhpur, (Raj.)

डिस्ट्रीब्यूटर बनने एवं डीलरशिप हेतु
टोल फ्री नं. पर सम्पर्क करें: 1800 313 3292

sonasikka.com | info@sonasikka.com | sonasikka
0291-2512333, 2512338
Available on : amazon | Flipkart

POSTAL ID: 1740526987/BPC JODHPUR HQ 41955312/RAJHIN/2020/11458

AYUSHI
BUILDCON PVT. LTD.

AYUSHI
BUILDERS & DEVELOPERS

221-222, Shyam Nagar, Pal Link Road, Jodhpur - 342 003 (Raj.)
Tel. : 0291-2710071 Mobile : 94141 27593, 93147 11416
E-mail : mdsharma74@live.in